बेजा-कर्ज से मुक्ति का संघर्ष

असफल सरकारी सिंचाई योजनाओं के बेजा कर्ज से मुक्ति का आदिवासी संघर्ष

सम्पर्क के बारे में

सम्पर्क म.प्र. एक स्वयंसेवी संस्था है जो गत दो दशकों से झाबुआ जिले के आदिवासियों एवं कमजोर वर्ग के ग्रामीणों के साथ मिलकर उनके सामाजिक-आर्थिक विकास के लिए प्रयास कर रही है। सम्पर्क की गतिविधियां मूलतः ग्रामीणों को स्वावलम्बी बनाने, उनकी सामाजिक सुपरम्पराओं को पुनर्स्थापित करने, रूढ़ियों से बचाने एवं रोजगारोन्मुखी शिक्षा, स्वास्थ्य और आजीविका के अलावा पानी, मिट्टी जैसी प्राकृतिक सम्पदा को बचाने से संबंधित मुद्दों पर केन्द्रित है।

सम्पर्क ने बीते वर्षों में पश्चिमी म.प्र. के आदिवासी अंचल में छोटे किसानों मजदूरों, आदिवासियों तथा आर्थिक रूप से कमजोर एवं वंचित वर्ग के लोगों को अधिकार सम्पन्न बनाने के लिए कई स्तरों पर कार्य किया है। इसके अलावा सम्पर्क ने रोजगार गारंटी कानून के सुचारु क्रियान्वयन, किसानी कर्ज से मुक्ति, जल के व्यापारीकरण पर रोक, प्राकृतिक संसाधनों के सहभागी संरक्षण एवं भारतीय कृषि पर आनुवंशिक इंजीनियरी का हमला आदि मुद्‌दों पर आम लोगों की समझ बनाने का कार्य भी किया है। जनहित में यह काम लगातार जारी है।

बेजा-कर्ज से मुक्ति का संघर्ष

असफल सरकारी सिंचाई योजनाओं के बेजा कर्ज से मुक्ति का आदिवासी संघर्ष

सम्पर्क

मध्यप्रदेश

सम्पर्क ग्राम, रायपुरिया, झाबुआ-457775

☎ : 91 7391 280185

email :smp_mp@yahoo.co.in

शीर्षक
बेजा कर्ज से मुक्ति का संघर्ष

प्रकाशक

सम्पर्क

सम्पर्क ग्राम, रायपुरिया, झाबुआ (मध्यप्रदेश)–457775

फोन - 91 7391 280185

ई–मेल : smp_mp@yahoo.co.in

सहयोग : कासा एवं मध्यांचल फोरम, भोपाल

संस्करण : 2009

प्रतियाँ : 1000

मुद्रक : एम.एस.पी. ऑफसेट, भोपाल. मो. : 98272 98040

अनुक्रमणिका

1.	**भूमिका**	**1**
1.1	संस्था का परिचय	1
1.2	प्रभाव विश्लेषण का तरीका	3
2.	**परिस्थिति का विश्लेषण**	**4**
2.1	इलाके की विशेषताओं का विश्लेषण	4
2.2	स्टेकहोल्डरों का विश्लेषण	8
2.3	समस्या का विश्लेषण	14
2.4	उद्देश्यों का विश्लेषण	21
3.	**रणनीति का विश्लेषण**	**22**
3.1	कानूनी पैरवी	22
3.2	जनता का जुड़ाव	24
3.3	सहभागिता अनुसंधान	26
3.4	मीडिया पैरवी	28
3.5	राजनीतिक नेटवर्किंग	29
3.6	सामाजिक पूंजी का पुनर्निमाण	30
3.7	वैकल्पिक विकास कार्यक्रम	30
3.8	आर्थिक सहयोग	31
3.9	शिक्षा और स्वास्थ्य कार्यक्रम	31
3.10	जेण्डर विकास कार्यक्रम	31
4.	**प्रभाव**	**32**
5.	**अभियान मूल्यांकन का स्वरूप**	**32**
6.	**भावी योजनाऐं**	**34**
7.	**संदर्भ**	**35**

आमुख

भारतीय संविधान के संविधान की पांचवीं अनुसूची में अनुकरणीय प्रावधान हैं जो आदिवासियों की विशेष सामाजिक-आर्थिक और सांस्कृतिक परिस्थिति पर विचार करती है जिनका यदि आदिवासी इलाकों में ठीक तरीके से कार्यान्वयन हो जाये तो देश के आदिवासी इलाकों में शान्ति और अच्छा अभिशान सुनिश्चित हो सकता है। इस सुरक्षात्मक काम को और आगे बढ़ाने के लिये कई कानून, नियम और नीतियां भी बनायी गयी हैं जिन्हें आदिवासियों के लिये उपलब्ध कराने की उम्मीद राज्य सरकार से की जाती है। फिर भी, विडंबना यह है कि इन प्रावधानों को शायद ही कभी लागू किया गया है जिससे आदिवासी आधुनिक विकास में न केवल गुम हो गये हैं बल्कि उन्हें उसकी कीमत भी चुकानी पड़ी है।

1980 के दशक के अन्त और 1990 के दशक के प्रारम्भ में झाबुआ जिले के जिला प्रशासन ने कई उद्वहन सिंचाई योजनाएं कार्यान्वित कीं जिनका रूपांकन ठीक नहीं हुआ था, क्योकि रूपांकन करने वालों को पर्यावरण की पर्याप्त जानकारी नहीं थी और चे सरकारी अधिकारियों, बैंक कर्मियों और ठेकेदारों के भ्रष्ट गठजोड़ के कारण ठीक से निर्मित नहीं की गयी थीं। परिणाम यह हुआ कि गरीब आदिवासियों पर उस कर्ज का भारी बोझ आ पड़ा जो उन्हें उन योजनाओं के लिये दिया गया था जिन्होंने कभी काम ही नहीं किया। जब बैंक ने कर्ज वापिस करने के लिये दबाव डाला तो उन्होंने सम्पर्क संस्था के सहयोग से लोक जागृति मंच के अन्तर्गत विरोध प्रदर्शन किया। उन्होंने पांचवीं अनुसूची के प्रावधानों के अन्तर्गत निर्मित एक यिनम का उपयोग किया, जिसमें कहा गया है कि जिन आदिवासियों को किसी गलत रूप से बनायी गयी और गलत तरीके से कार्यान्वित की गयी योजना की असफलता के लिये दोषी नहीं पाया जाता तो उन पर उस कर्ज का भार नहीं डाला जा सकता जो उनके नाम पर लिया गया है। एक लम्बी लड़ाई के बाद, आदिवासी इन कर्जों को माफ कराने में कामयाब हुए हैं। लॉजिलल फ्रेमवर्क एनालिसिस (Logical Framework Analysis) का उपयोग करके इस महान संघर्ष के प्रभाव का विश्लेषण यहां प्रस्तुत किया जा रहा है, ताकि इस सारी प्रक्रिया का दस्तावेजीकरण सीख के उपकरण के रूप में दूसरों के लिये उपयोगी हो सके।

निलेश देसाई

1. भूमिका

फरवरी 2006 में झाबुआ जिले के सैकड़ों भील आदिवासी अपने जन संगठन ''लोक जागृति मंच'' के बैनर के अन्तर्गत भारत के मध्यप्रदेश राज्य की राजधानी भोपाल में धरना दे रहे थे और मांग कर रहे थे कि जिस असफल उद्‍वहन सिंचाई योजना के लिये वित्तीय संस्थाओं द्वारा उन्हें कर्ज दिया गया था उसकी अन्यायपूर्ण वसूली रोक दी जाये क्योंकि इस योजना की असफलता में उनकी कोई गलती नहीं थी। उनका कहना था कि यह साबित करने के लिये उनके पास निर्णायक सबूत हैं कि यह उद्‍वहन सिंचाई योजना जल स्रोत के गलत नियोजन पर आधारित थी और इसमें पानी को मुनाफे के स्रोत के रूप में देखा गया था जैसा कि आजादी के बाद लोग कर रहे थे। इसमें पानी को जीवन के स्रोत के रूप में नहीं देखा गया, जैसा कि सदियों से भील करते आ रहे थे। इसमें कोई शक नहीं कि सारी दुनिया में पानी को अब एक वस्तु माना जाने लगा है और उसका अनियंत्रित उपयोग किये जाने से पानी की गंभीर कमी की समस्या पैदा रही है और समय बीतने के साथ यह समस्या और भी गंभीर हो रही है। मौजूदा मामला इसका अच्छा उदाहरण है (कॉसग्रोव और रिसबर्मन 2000)। अन्त में दस दिन बाद मध्यप्रदेश सरकार ने आंशिक रूप से उनकी मांगें मान लीं और कर्ज वसूली रोक दी और उनकी मांगों की विस्तृत जांच का आदेश दिया। इसके बाद ''लोक जागृति मन्च'' और उसके सहयोगी संस्था सम्पर्क के द्वारा लगातार किये जा रहे जन अभियान और दबाव के कारण एक साल बाद यानी 2007 में यह कर्ज माफ कर दिया गया। स्वतंत्र भारत के इतिहास में यह पहला मौका था कि आदिवासियों के ऊपर विकास से संबंधित जो कर्ज था वह अधिकारों के अनवरत अभियान के परिणामस्वरूप माफ कर दिया गया। अधिकारों के इस अनोखे अभियान का यहां प्रभाव–विश्लेषण (Impact Analysis) किया गया है ताकि इससे सीख मिल सके और भविष्य में बड़े पैमाने पर लागू करने के लिये इसे व्यवस्थित किया जा सके।

1.1 संस्था का परिचय

सम्पर्क संस्था 1987 झाबुआ जिले की पेटलावद तहसील में सोशल वर्क एण्ड रूरल सेन्टर (Social Work and Rural Centre-SWRC), तिलोनिया (राजस्थान) की एक इकाई के रूप में शुरू की गयी थी और उसे औपचारिक रूप से 1990 में सोसायटी रजिस्ट्रेशन एक्ट के अन्तर्गत रजिस्टर कराया गया। इस इलाके को

काम के लिये इसलिये चुना गया कि यहां आदिवासियों के शोषण का रूप और गहनता विकट थी, यहां विकास के जो काम किये जा रहे थे वे आदिवासियों की हालत सुधारने के मान से नगण्य थे और इस इलाके में स्वयंसेवी संस्थाओं की भी कमी थी। लोगों की आजीविका की जरूरतों और विकास संबंधी आकांक्षाओं पर ध्यान देते हुए काम शुरू किया गया। स्थानीय हालात के कारण पैदा हुई समस्याओं को हल करके सम्पर्क धीरे–धीरे एक बहु आयामी संस्था के रूप में विकसित हो गया। काम के लक्ष्य और तरीके के बारे में दो फैसले किये गये–

1. सभी काम समाज के कमजोर वर्ग के साथ किये जायेंगे।
2. सभी कार्यक्रमों के बनाने और उनके क्रियान्वयन में लोगों की सहभागिता का तरीका अपनाया जायेगा।

परिणाम यह हुआ कि सरकारी और अन्तर्राष्ट्रीय एजेन्सियों की केन्द्रीकृत योजनाओं को आंख मूंदकर लागू करने के स्थान पर आपसी संवाद के जरिये स्थानीय समस्याओं का उचित हल करने के लिये संस्था के कार्यकर्ताओं को और सहभागी समुदायों को सीखने का पर्याप्त अवसर मिला। लोगों को जागरूक करने और विकास के काम के लिये गतिविधियां हाथ में ली गयीं। संस्था इस बात पर जोर देती है कि स्थानीय युवाओं के समूहों का गठन किया जाये और उन्हें नुक्कड़ नाटक तथा कठपुतली का प्रशिक्षण दिया जाये। इन समूहों ने इलाके की समस्याओं और उनके हल के लिये संगठित राजनीतिक तथा सामुदायिक कार्यवाही के महत्व के बारे में लोगों में बहस पैदा करने के लिये इन माध्यमों का उपयोग किया। ये कोशिशें लोगों के साथ संवाद बनाने और संस्था की एक पहचान बनाने में उपयोगी हुए। लक्षित हर गांव में महिला और पुरुष संगठन गठित किये गये और ग्राम कोष बनाये गये। लोग मिलकर मंहगे वधू–मूल्य और खर्चीले मृतक संस्कार जैसी सामाजिक कुरीतियों और उनके हल तलाशने के बारे में बात करने लगे। साथ ही उन्होंने अधिकारों के उल्लंघन के मुद्दों से निपटने के लिये ''लोक जागृति मंच'' का गठन भी किया। मंच अब एक पूरी तरह विकसित संगठन बन गया है और यह क्षेत्र के लोगों के हितों की पैरवी, पारस्परिक झगड़ा निपटान समूह संचालन (जाति पंचायत), आदिवासी समाज की सुपरम्पराओं की पुनर्स्थापना, कुरीतियों का निवारण, शासकीय जनकल्याणकारी योजनाओं के सुचारु क्रियान्वयन हेतु दबाव बनाने जैसे कार्य में जुटा है।

1.2 प्रभाव विश्लेषण की पद्धति (Methodology of Impact Analysis)

फिलहाल प्रभाव–विश्लेषण की प्रचलित पद्धति लॉजिकल फ्रेमवर्क या लॉग–फ्रेम एनालिसिस (LFA) है, जिसमें आकलन के कुछ उपकरण होते हैं, जिन्हें यदि रचनात्मक रूप से लागू किया जाये तो उनका उपयोग अधिकार–अभियानों का मूल्यांकन करने के लिये किया जा सकता है। LFA का मकसद एक ऐसा वस्तुपरक आकलन करना है जो अधिकार–अभियान के प्रभाव का मूल्यांकन कर सके। यहां जो LFA किया गया है उसमें नीचे लिखी बातें शामिल हैं–

1.2.1 परिस्थिति का विश्लेषण (Situation Analysis)

इस विस्तृत विवरण और विश्लेषण में नीचे लिखी ये बातें हैं–

1. उस इलाके की सामाजिक–आर्थिक विशेषताओं का विहंगावलोकन जहां अभियान किया गया।
2. अभियान के इलाके में विभिन्न स्टेकहोल्डरों और उनके ऐतिहासिक और मौजूदा आपसी रिश्तों का विश्ेलषण।
3. अभियान में जिन विभिन्न मुद्दों को हाथ में लिया गया था उनका विश्लेषण।
4. अभियान के लक्ष्यों को तय किये जाने का और उन्हें हासिल करने के लिये काम में लाये गये माध्यमों का वस्तुपरक विश्लेषण।

1.2.2 रणनीतिक विश्लेषण - इस विश्लेषण में समस्या और उद्देश्यों का विश्लेषण किया गया है और वांछित नतीजों के लिये जो रणनीति अपनायी गयी है उसे उजागर किया गया है। जो कदम उठाये गये थे उनके पीछे के तर्कों का परीक्षण करने के अलावा यह इस बात को भी भी देखता है कि वे वास्तव में कितने व्यावहारिक हैं।

1.2.3 प्रभाव की माप - इसमें परियोजना के प्रभाव को निष्पादन के विभिन्न संकेतकों के जरिये मापा गया है।

1.2.4 परियोजना के मूल्यांकन का रूप - इसमें नीचे लिखी बातों का एक पृष्ठ का सारांश है–

1. परियोजना क्यों शुरू की गयी (उसके लक्ष्य क्या हैं)

2. परियोजना से क्या हासिल हुआ (सेवाओं का उपयोग)
3. परियोजना ने अपने परिणाम किस प्रकार हासिल किये (अपनायी गयी रणनीतियां)
4. परियोजना के क्या परिणाम रहे (प्रभाव)
5. किन बाहरी तत्वों ने परियोजना की सफलता और असफलता को प्रभावित किया (जोखिमऔर ढांचागत परिस्थितियां)

1.2.5 भावी योजनाएं - इसमें सम्पर्क और लोक जागृति मंच की भावी योजनाएं दी गयी हैं।

2. परिस्थिति का विश्लेषण (Situation Analysis)

परिस्थितियों के विश्लेषण में उस इलाके की विशेषताओं का विश्लेषण, स्टेकहोल्डरों का विश्लेषण, समस्या का विश्लेषण और उद्देश्यों का विश्लेषण इसी कम में किया गया है ताकि क्षेत्र विशेष की परिस्थिति संबंधी उन मानदण्डों की पूरी समझ हो सके जिन्होंने अधिकारों के इन अभियानों को प्रभावित किया है।

2.1 इलाके की विशेषताओं का विश्लेषण

मध्यप्रदेश के दक्षिण–पश्चिम कोने में स्थित झाबुआ जिले में भील आदिवासी रहते हैं जिनकी उप–जनजातियां भील, भिलाला, पटेनिया और मानकर हैं। ये सब मिलकर जिले की कुल आबादी का 86.8% हैं (जनगणना 2001)। अभियान का इलाका झाबुआ जिले की पेटलावद तहसील में है जहां आदिवासी आबादी तुलनात्मक रूप से कम अर्था सिर्फ 76% है। यह जिला मालवा के दक्षिण में विन्ध्या पर्वतश्रेणियों में स्थित है और यहां बहुत कम जंगल हैं तथा यहां भारी भूक्षरण होता हैं। पेटलावद तहसील से माही नदी बहती है जो जिले की उत्तरी सीमा बनाती है। कहीं–कहीं मध्यम काली किस्म की मिट्टी है। जमीन के नीचे की चट्टानें ज्यादातर आर्कियन इग्नियस हैं और कुछ कड़े पत्थर, डेक्कन ट्रेप बेसाल्टिक और सेडीमेन्टरी संरचनाएं भी हैं। पहली दो संरचनाओं में कम रंध्रता और पारगम्यता होती है जिससे भूजल के संग्रहों में कम पानी बचाये रखने की क्षमता होती है। जबकि डेक्कन ट्रेप और सेडीमेन्टरी संरचनाओं में बेहतर एक्विफर होते हैं, वे कम हैं और एक दूसरे से

बहुत दूर हैं (मध्यप्रदेश शासन, 2002)। इस प्रकार भूभाग और उसके सनीचे का भूगर्भीय ढांचा मिलकर सालाना बारिश के 829 मि.मी. पानी को बारिश के मौसम में बहा देते हैं और इसका परिणाम यह होता है कि साल में सिर्फ 519 घनमीटर भूजल उपलब्ध होता है (के. भू. बो, 2006) यह इलाका मालवा के पठार कृषि–जलवायु जोन में आता है और मैदानों में ही मध्यम काली मिट्टी के कुछ टुकड़े पाये जाते हैं जिनमें नाइट्रोजन, फास्फोरस और पोटेशियम के मुख्य पोषकों का मध्यम स्तर है। अधिकांश पहाड़ी इलाके में ज्यादातर सतही मिट्टी हलकी और लेटरिटिक है।

तहसील में जो बेहतर प्रकार की मिट्टी है वह गैर आदिवासियों के पास है जबकि 76: आदिवासियों के पास घटिया स्तर की जमीन है जो ज्यादातर असिंचित है और ऊपरी जलग्रहण इलाकों में है। इस प्रकार पेटलावद तहसील में फसलों की पैदावार का जो विवरण चित्र 1 में बताया गया है उसमें आदिवासियों की सभी फसलों की जानकारी नहीं मिलती, जिनमें अनाज और दालें ज्यादा हैं और कपास, तिलहन और चारा कम है। दुर्भाग्य से इस अन्तर को उजागर करने वाला विवरण सरकार के पास उपलब्ध नहीं है।

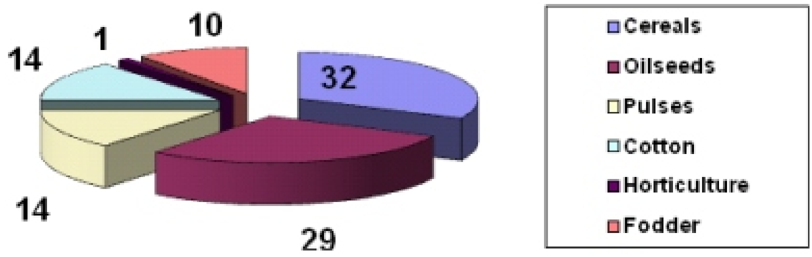

चित्र 1 : पेटलावद तहसील में होने वाली फसलें में %

स्रोत : जिला सांख्यिकी पुस्तिका 2006, आर्थिक और सांश्यिकी विभाग, मध्यप्रदेश शासन

इस इलाके में सबसे बड़ी समस्या यह है कि भूमि बहुत से टुकड़ों में बंटी हुई है, जैसा कि नीचे की सारिणी 1 में दर्शाया गया है। असल में इन आंकड़ों से असली हकीकत का पता नहीं चलता क्योंकि भूमि तो बुजुर्गों के नाम से है जबकि जमीनी हालत यह है कि बेटों ने अपने पिता की भूमि को अपने बीच बांट लिया है। भूमि की इस भूख के कारण सरकारी सार्वजनिक जमीन पर अतिक्रमण हो रहा है और ऐसी भूमि का वास्तविक अनुपात सरकारी अभिलेखों में दिखायी गयी भूमि से काफी कम

है। इस कारण वही जमीन छोड़ी गयी है जो एकदम बंजर है और जहां मवेशी चरते हैं। जंगल का इलाका बहुत कम है। सिंचाई का क्षेत्र करीब 30% है जो ज्यादातर छोटे पम्पों से होती है।

सारिणी 1 : पेटलावद तहसील में भूमि उपयोग का स्वरूप

प्रति घर कृषि योग्य भूमि (हे)	कृषि योग्य भूमि (%)	सार्वजनिक राजस्व भूमि (%)	वन भूमि (%)	सिंचित भूमि (%)
1.14	55	40	5	30

स्रोत : जिला सांख्यिकी पुस्तिका 2006, आर्थिक और सांख्यिकी विभाग, मध्यप्रदेश शासन

तहसील में पैदा होने वाली फसलें नीचे चित्र 2 में दिखायी गयी हैं और जैसा कि स्पष्ट है, ये राष्ट्रीय औसत से कम हैं। आदिवासियों के लिये ये उपजें और भी कम हैं क्योंकि उनके पास अच्छी जमीन नहीं है और वे उसमें ज्यादा धन भी नहीं लगा पाते।

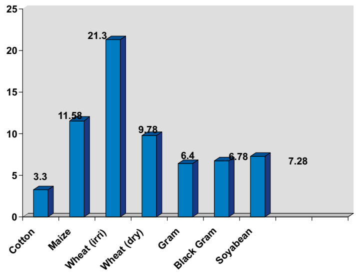

चित्र 2 : पेटलावद तहसील में फसलों की पैदावार (क्वि./है.) में

स्रोत : जिला सांख्यिकी पुस्तिका 2006, आर्थिक और सांख्यिकी विभाग, मध्यप्रदेश शासन

झाबुआ जिले के मानव विकास के संकेतक और मध्यप्रदेश के पैंतालीस जिलों में झाबुआ जिले का क्रम नीचे की सारिणी 2 में दिये गये हैं। यह साफ है कि जिला पिछड़ा है क्योंकि इसका मानव विकास संकेतक सभी जिलों में सबसे खराब है। गरीबी का क्रम उतना खराब नहीं है क्योंकि लोग आसपास के विकसित इलाकों में पलायन करके अतिरिक्त आय कमा लेते हैं। चूंकि शिक्षा और स्वास्थ्य की स्थिति बहुत खराब है और पलायन के कारण यह और भी खराब हो जाती है, समग्र मानव विकास की स्थिति चिन्ता का विषय है। प्रति व्यक्ति अनाज उत्पादन का क्रम ऊंचा

है क्योंकि ग्रामीण आबादी का अनुपात 91ः है जो जयादातर खेती करती है। जिले में कुल प्रजनन की ऊंची दर महिलाओं द्वारा भोगे जा रहे पितृत्व के ऊंचे स्तर का संकेतक है। इसकी पुष्टि निम्न जेण्डर विकास संकेतक से भी होती है।

सारिणी 2 : झाबुआ जिले के लिये कुछ चुनिन्दा मानव विकास संकेतक

क्र.	संकेतक	मूल्य	45 जिलों में क्रम
1	मानव विकास संकेतक	0.372	45
2	जेण्डर विकास संकेतक	0.450	43
3	खेती पर आश्रित आबादी (%)	90.6	2
4	शिशु मृत्यु दर	130	42
5	जीवन प्रत्याशा (2001)	55.8	30
6	कुल प्रजनन दर	7.0	45
7	गरीबी रेखा से नीचे (%)	31.2	20
8	सालाना प्रति व्यक्ति अनाज पैदावार (क्वि.)	268.22	21

स्रोत : तृतीय मानव विकास प्रतिवेदन मध्यप्रदेश 2002, मध्यप्रदेश शासन

झाबुआ जिले में जिस इलाके में सम्पर्क काम कर रहा है वह मध्यप्रदेश के नीचे के चित्र 3 में दर्शाया गया है। यह स्पष्ट है कि भौगोलिक रूप से यह इलाका प्रदेश के प्रशासनिक और राजनीतिक सत्ता के केन्द्रों से बहुत दूर है और और इसीलिये यह उपेक्षित भी है। इसी कारण दूसरे इलाकों की तुलना में इसका विकास पिछड़ा हुआ है। सड़क मार्ग से भी यह पर्याप्त रूप से जुड़ा नहीं है। हालांकि मुम्बई–दिल्ली रेल लाइन जिले के उत्तरी भाग से होकर जाती है, इस रेलवे लाइन के किनारे कोई महत्वपूर्ण आर्थिक विकास नहीं हुआ है।

2.2 स्टेकहोल्डर विश्लेषण

अभियान के इलाके में अभियान से जुड़े विभिन्न स्टेकहोल्डरों के बीच जो रिश्ते हैं उनका विश्लेषण दो चरणों में किया गया है। प्रथम, इन रिश्तों के ऐतिहासिक विकास को रेखांकित करने के लिये पश्चिमी मध्यप्रदेश का संक्षिप्त इतिहास बताया गया है। इसके बाद इस इलाके की मौजूदा स्थिति का विश्लेषण किया गया है जिससे स्थानीय स्टेकहोल्डरों की शाखा प्रशाखाओं का खाका बन सके।

2.2.1 पश्चिमी मध्यप्रदेश का इतिहास

पारम्परिक रूप से भील बेवर खेती (shifting cultivation), शिकार और इलाके के घने जंगलों में शिकार और वनोपजें एकत्र करके अपनी गुजर–बसर करते रहे हैं। उनके खेतों का उपजाऊपन कम होने और महामारियों के कारण उन्हें हर साल नयी जगह जाना पड़ता था। सिर्फ भरणपोषण और मजदूरी पर ज्यादा निर्भर रहने के कारण उनके पास यह विकल्प नहीं रहा कि वे अपने भौतिक और सांस्कृतिक जीवन के ज्यादातर पहलुओं में श्रम के आपसी सहयोग के जरिये अपने समुदाय के साथ एकीकृत हो सकें। ज्यादा संतानें होने पर भी भीलों की समतावादिता उन रिवाजों के कारण कायम रही जो यह तय करते थे कि एक खास सीमा के बाद होने वाली बचत को समुदाय के आमोद–प्रमोद और भोज में खर्च किया जायेगा। इससे यह संभावना भी खत्म हो गयी कि वे इस बचत का उपयोग खेती और कारीगरी के उत्पादन के विकास में और व्यापार में लगाने में करते जिससे अतिरिक्त धन मिलता। इससे पर्यावरण का जरूरत से ज्यादा दोहन भी नहीं हुआ (राहुल, 1997)। व्यापार से इस बेरुखी का मतलब यह भी था कि वे साक्षरता और आंकड़ों के गुणा–भाग से दूर रहे और मजबूती से जमीन से जुड़े रहे और उन्होंने एक सम्पन्न वाचिक संस्कृति विकसित की जिसके केन्द्र में प्रकृति थी। इस प्रकार उनके लिये प्राकृतिक संसाधनों, खासकर पानी का कोई व्यापारिक मूल्य नहीं था। जिस इलाके में वे रहते थे और जिस प्रकार की खेती करते थे, उसने सिंचाई के विकास को भी प्रोत्साहित नहीं किया। फिर भी, अपनी बुद्धिमत्ता का उपयोग करके भीलों ने ऐसी अनोखी सिंचाई प्रणाली विकसित की जिसमें पहाड़ी नालों में अस्थायी बंधान बनाये जाते थे और कम ढलान वाली नालियों से पानी आगे पहुंचाया जाता था और इस प्रकार वे प्राकृतिक गुरुत्वाकर्षण के जरिये कुछ किलोमीटर दूर के अपने छोटे–छोटे खेतों तक पानी ले आया करते थे (राहुल 1996)।

भीलों के कृषि आधार का विनाश और पश्चिमी मध्यप्रदेश में भूमि, पानी और वन के महत्वपूर्ण प्राकृतिक संसाधन पर उनका नियंत्रण खत्म होने का एक लम्बा इतिहास है। सोलहवीं सदी और उसके बाद मुगलों और राजपूतों के दबाव के कारण उन्हें मालवा के पठार और निचली नर्मदा घाटी की सीमा के निमाड़ के मैदानों की जयादा उपजाऊ भूमि को छोड़ना पड़ा और घटिया भूमि पर खेती करने के लिये जंगली पहाड़ियों में चला जाना पड़ा। व्यापार और स्थायी कृषि के बढ़ने से यह प्रक्रिया और तेज हो गयी क्योंकि मैदानों के अधिकाधिक जंगल काटकर खेती की जाने लगी। अंग्रेजों ने 1860 के दशक के बाद से रेलवे लाइनें बिछाकर इस बदलाव को तेज कर दिया और इन इलाकों को व्यापार और साहूकारों के लिये खोल दिया। ये लोग सुदूर इलाकों में कर उगाहने का काम भी करते थे। जंगल और खेती की जमीन पहुंच के बाहर होने, भारी कर के भार और साहूकारों द्वारा शोषण होने के कारण भील आजादी के पहले ही दरिद्र हो गये थे। (बनर्जी, 2003)।

दुर्भाग्य से आदिवासियों के प्रति यह औपनिवेशिक संवेदनहीनता आजादी के बाद भी कायम रही जिसके कारण आदिवासियों की बड़ी आबादी का विस्थापन हुआ और वे परेशानी में पड़े। एक स्थापित तथ्य यह है कि आदिवासियों की सुरक्षा के लिये भारत के संविधान के उपबन्धों के अन्तर्गत जो संस्थाएं स्थापित की गयी हैं वे ठीक से काम नहीं कर रही हैं। ऐसी सबसे जयादा ताकतवर संस्था है आदिवासी सलाहकर परिषद जो संविधान की पांचवीं अनुसूची के उपबन्धों के तहत हर राज्य में स्थापित की जानी है। राज्य की विधान सीमा के आदिवासी सदस्यों से बनी यह परिषद राज्यपाल को यह सलाह दे सकती है कि वे आदिवासियों की सुरक्षा और विकास के लिये नीतियां कायम करें। दूसरी संस्था है अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति आयोग। इसके अलावा जो कानून और नीतियां समय–समय पर बनायी गयीं उन्हें भी प्रभावी तरीके से लागू नहीं किया गया, जैसे आदिवासियों की जमीन का हड़पना रोकने के लिये बना अध्यादेश। यह मुख्यतः इसलिये हुआ है कि राज्य ने विकास की गलत नीतियां अपनायीं, जिनके कारण आदिवासियों की तुलना में गैर–आदिवासियों की राजनीतिक और आर्थिक ताकत कमजोर होने की बजाय बढ़ी है। उदाहरण के लिये, तेजी से होने वाले आधुनिक औद्योगिक विकास का मतलब यह हुआ है कि आदिवासी बसाहटें खनिज, व्यावसायिक वनीकरण और बड़े बांध बनाने के लिये अधिग्रहित कर ली गयी और जो लोग विस्थापित हुए उन्हें न तो माकूल मुआवजा दिया गया और न वैकल्पिक रोजगार के साधन दिये गये।

यह ध्यान रखा जाना चाहिये कि मध्यप्रदेश खुद गरीब राज्यों के केन्द्रीय भारतीय बीमारु समूह का भाग है, जिसमें बिहार, मध्यप्रदेश, राजस्थान और उत्तरप्रदेश हैं। आम तौर पर यह माना जाता है कि सामाजिक, आर्थिक और मानव विकास के सभी पहलुओं को ध्यान में रखते हुए, दक्षिण भारत के चार राज्य तामिलनाडु, कर्नाटक, आंध्र और केरल बाकी भारत से आगे हैं। इस प्रकार इन दक्षिणी राज्यों ने अपनी सामाजिक और मानव पूंजी के बल पर पंजाब, महाराष्ट्र और गुजरात जैसे सम्पन्न राज्यों के बराबर आ गये हैं। स्वाभाविकतः दक्षिणी राज्य सभी मानों में गरीब बीमारु राज्यों से बहुत आगे हैं। तामिलनाडु राज्य की आबादी मध्यप्रेश के करीब–करीब बराबर ही है, जबकि वह उससे भौगोलिक रूप से आकार में छोटा है और प्राकृतिक संसाधनों के मामले में वह मध्यप्रदेश की तुलना में गरीब है। दोनों राज्यों के आर्थिक और मानव विकास संकेतक, जो सारिणी 3 में दिये गये हैं, बताते हैं कि किस प्रकार अपनी मानव पूंजी की निम्न गुणवत्ता के कारण मध्यप्रदेश तामिलनाडु से पीछे है।

सारिणी 3 : तामिलनाडु और मध्यप्रदेश के चुनिन्दा विकास संकेतक

क्र.	संकेतक	तमिलनाडु	मध्यप्रदेश
1	आबादी (2001)	62,110,839	60,385,118
2	प्रति व्यक्ति शुद्ध राज्य घरू उत्पादन 1999–2000 (रु.)	19,141	10,907
3	कर्ज / जमा अनुपात 2001 (%)	90.6	52.5
4	निजी और सरकारी निवेश 2001 (करोड़ रुपये)	1,63,303	44,001
5	निजी और सरकारी निवेश 2001 प्रति व्यक्ति (रु.)	26,292.19	7,286.73
6	नियोजित सरकारी व्यय 2001–02 (करोड़ रुपये)	5200	3937
7	ऋण उपयोग 2001 (करोड़ रुपये)	57,106.8	15,264.2
8	सरकारी गरीबी रेखा के नीचे की आबादी 1999–2000 (%)	20.6	37.1
9	कर–NSDP अनुपात 1998.99 (%)	9.1	6.3
10	सड़कों की लंबाई 1993–94 (कि. / 1000 वर्गकिलो.)	1434	309

11	कृषि का मशीनीकरण 1993–94 (अश्वशक्ति–1000 है)	1143.3	248.8
12	ग्रामीण लिंगानुपात 1992.93 (स्त्री–1000 पुरुष)	1001	901
13	शिशु मृत्युदर 1992.93 (प्रति 1000 जीवित जन्म)	67.7	85.2
14	कुल प्रजनन दर 1992–93	2.48	3.90
15	साक्षरता 2001 (%)	73.5	64.1
16	UNDP मानव विकास दर 2001	0.531	0.394
17	UNDP जेण्डर विकास दर 2001	0.81	0.54

स्रोत : तीसरा मानव विकास प्रतिवेदन मध्यप्रदेश– 2002, मध्यप्रदेश शासन, जनगणना 2001, भारत सरकार, "Infrastructure in India",1996, Centre for Monitoring Indian Economy, Mumbai, Report of Perspective Planning Division 2001, Planning Commission, GOI, "Statistical Abstract of India",1997, Central Statistical Organisation, GOI, Human Development Report, 2001, United Nations Development Programme, National Family Health Survey 1, 1991-92, International Institute of Population Sciences, Mumbai.

तब इसमें आश्चर्य नहीं कि पश्चिमी मध्यप्रदेश के भील आदिवासियों के आर्थिक और मानव विकास संकेतक, जैसा कि पहले देखा जा चुका है, मध्यप्रदेश में सबसे कम हैं, जिसकी खुद की हालत देश के अधिक विकसित राज्यों की तुलना में बहुत खराब है।

2.2.2 मौजूदा स्थिति

इस संबंध में राष्ट्रीय नीति के अनुसार आजादी के बाद सरकारी वित्त का जो केन्द्रीकरण उद्योगों में और नदी घाटियों में गैर–आदिवासियों की ज्यादा उपजाऊ जमीन पर हरित–क्रान्ति खेती को बढ़ावा देने में हुआ है (NCAER, 1963), और ऊपरी जलग्रहण क्षेत्रों में भीलों के अपेक्षाकृत जयादा सूखे इलाकों की जो उपेक्षा हुई है उसके कारण उस इलाके में संसाधनों का बंटवारा उनके और भी विपरीत हो गया है। हरित क्रान्ति के लाभ साहूकारों द्वारा हड़प लिये गये, जो खेती के काम आने वाली चीजों का और बढ़ी हुई उपज का व्यापार करते थे। इन्होंने भारी ब्याज में कर्ज देकर खूब लाभ कमाया। खेती के काम आने वाली चीजों पर सरकार द्वारा दी जा रही सबसिडी तथा आदिवासियों की मजदूरी कम रखने की उनकी ताकत के कारण बड़े किसानों को भी भारी फायदा हुआ (बनर्जी, पूर्वोक्त)। भीलों के

आवास क्षेत्र की कठिन भौगोलिक परिस्थितियों के लिये उपयुक्त देशज फसलों पर अनुसंधान और विकास के लिये राज्य के सहयोग की कमी के कारण भी भीलों का आर्थिक आधार कमजोर हुआ है। इस प्रकार भील आदिवासी साहूकारों के शिकंजे में रहते रहे हैं, जो इस इलाके के ग्रामीण बाजारों पर कब्जा जमाये हुए हैं और किसानों की उपजों का कम दाम देकर, खेती के काम की चीजों के ज्यादा बहुत ज्यादा दाम लेकर और भारी ब्याज पर कर्ज देकर किसानों का शोषण कर रहे हैं। (अरोरा, 1972)। परिणाम यह हुआ है कि ज्यादातर भील आदिवासियों को स्थायी रूप से या मौसम आने पर पलायन पर भरोसा करना पड़ता है जिससे वे अपना भरण पोषण कर सकें (मोजेस और अन्य, 2002)। इसका मतलब यह है कि भीलों के पास श्रम की जो एकमात्र पूंजी है और जिसका उपयोग वे पहले अपने खेतों के लिये कर रहे थे, वह अब उन इलाकों के लोगों की परिसम्पत्तियों का निर्माण करने में खर्च हो रही है, जो पहले से ही विकसित हैं। इस प्रकार भीलों के साथ और भी अन्याय हो रहा है।

चूंकि राज्य अच्छी और उपयुक्त शिक्षा उपलब्ध कराने में असफल रहा है इसलिये हालात और भी जटिल हो गये हैं और भील आदिवासी प्रशासन की आधुनिक पद्धति की जटिलताओं का मुकाबला करने के योग्य नहीं रह गये हैं। प्रशासन की इस पद्धति में उन्हें बलात शामिल किया गया है। विकास की इन गलत नीतियों के कारण पैदा हुई गरीबी के कारण आदिवासियों के भोजन के पोषण स्तर विपरीत प्रभाव पड़ा है। अच्छी और सस्ती स्वास्थ्य सेवाएं न होने के कारण भी उनके स्वास्थ्य कमजोर हुआ है। इसके अलावा महिलाओं के लिये शिक्षा और स्वास्थ्य की बेहतर सेवाओं की कमी का परिणाम यह हुआ है कि वे सदियों पुराने पितृसत्ताक ढांचे को तोड़ने में कामयाब नहीं हुई हैं और फलस्वरूप उन्हें प्रजनन का अधिकार न होने से आबादी का विस्फोट हुआ है। इस कारण जो भी थोड़े संसाधन हैं उन पर दबाव ज्यादा हो गया है।

इन सभी तत्वों ने मिलकर ऐसा परिदृश्य प्रस्तुत किया है जिसमें बाजार की आधुनिक प्रणाली के ठीक से न चलने के कारण आदिवासियों का लगातार शोषण हो रहा है। यह उनकी गुजर– बसर की जीवन प्रणाली के भीतर अधिकाधिक प्रवेश कर गया है और वे गैर–आदिवासी साहूकारों का बंधुआ बनने के लिये बाध्य हो रहे हैं। ये साहूकार कई सालों में आर्थिक रूप से बहुत शक्तिशाली हो गये हैं।

इस प्रकार हालांकि आदिवासियों के लिये आरक्षण है, जिससे यह सुनिश्चित होता है कि झाबुआ जैसे पांचवीं अनुसूची के जिले में गांव से केन्द्रीय स्तर के सभी सरकारी निर्वाचित स्थानों के लिये उनके लिये आरक्षित हैं, लेकिन जो राजनीतिक दल ये चुनाव लड़ते हैं उनके कार्यकर्ताओं में गैर–आदिवासी साहूकारों का आधिपत्य हैं। मौजूदा हालत यह है कि सरपंच जैसे पद के लिये सफल होने के लिये उम्मीदवार को औसतन करीब 25 हजार रुपये खर्च करना पड़ता है। इससे यह आसानी से अनुमान लगाया जा सकता है कि विधान सभा और लोकसभा के चुनाव के आदिवासी उम्मीदवार को किस प्रकार दल के साहूकार बहुल कार्यकताओं पर निर्भर रहना पड़ता है। इसलिये इसमें आश्चर्य नहीं कि सभी स्तर के निर्वाचित आदिवासी प्रतिनिधि आम आदिवासियों की कीमत पर इन साहूकारों के हितों को ही आगे बढ़ाते है और आदिवासियों की हालत ज्यादा खराब होती जा रही है।

भीलों ने न सिर्फ अपने प्राकृतिक संसाधनों के आधार खो दिये हैं बल्कि इसके कारण गुजर–बसर लायक खेती पर आधारित जीवन प्रणाली के पतन कारण उनका अपनी संस्कृति पर भरोसा उठ गया है। भीलों की गरीबी के कारण समुदाय की कड़ियां टूट रही हैं और गैर–आदिवासी दमनकारियों के कारण उनकी संस्कृति का लगातार पतन हो रहा है। अंतिम आघात के रूप में नर्मदा पर बांध बन रहा है जिसमें न सिर्फ भीलों का इलाका पूरी तरह बरबाद हो रहा है बल्कि गैर–आदिवासियों की आबादी वाले इलाके में विस्थापन से भीलों की संस्कृति भी खतरे में पड़ गयी है। शक्ति का पदक्रम दर्शाने वाला स्थानीय स्टेकहोल्डरों का यह चार्ट नीचे चित्र 4 में बताया गया है–

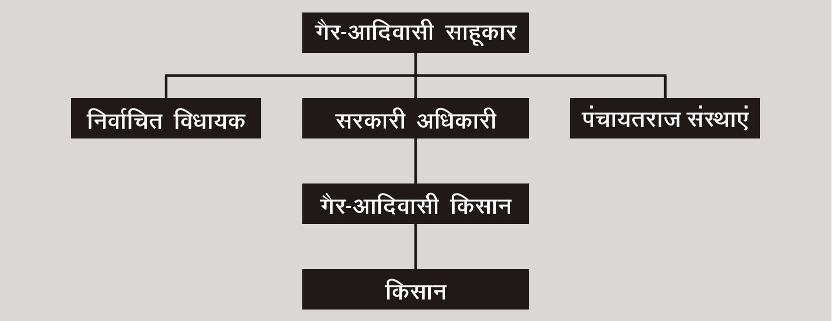

चित्र 4 : अभियान के इलाके में स्थानीय स्टेकहोल्डरों का चार्ट

2.3 समस्या का विश्लेषण

मौजूदा अभियान की खास बातों की बात करें तो पता चलता है कि पश्चिमी मध्यप्रदेश के आदिवासियों को लेकर जल प्रबंधन के क्षेत्र में बनी योजना पूरी तरह असफल हुई है। किसी भी नदी बेसिन में खास तौर से शुष्क भूमि वाले इलाकों में, जमीन पर और जमीन के नीचे से बहने वाले पानी के प्रबंधन का सही तरीका यह होता है कि यह नदी के जलग्रहण क्षेत्र की सबसे ऊपरी लघु जलग्रहण क्षेत्र की पहाड़ी से शुरू किया जाये और वहां से नीचे नदी तक आया जाये (शाह और अन्य)।

बड़े बांध बनाने की तुलना में यह आर्थिक रूप से ज्यादा सस्ता होता है और सामाजिक रूप से न्यायपूर्ण तथा पर्यावरण के लिहाज से ज्यादा सुरक्षित भी होता है। बांध तो तब बनाना चाहिये जब स्थानीय पानी के स्थानीय रूप से संरक्षण और दोहन किये जाने से जरूरतें पूरी न हो रही हों। ऐसा तो नहीं किया गया और दो बड़े बांधों की योजना बन गयी है जो नर्मदा और माही नदी पर बन रहे हैं। इनसे मैदानों पर नियंत्रण रखने वाले गैर–आदिवासियों को लाभ होगा और आदिवासियों को लावारिस छोड़ दिया जायेगा। इसके अलावा, मोटर से चलने वाली उद्वहन सिंचाई योजनाएं (Lift irrigation Schemes- LIS) भी बड़े पैमाने पर बनायी गयी हैं।

लगता है कि वे भीलों के साथ किये गये अन्याय की भरपाई करने के लिये बनायी गयी हैं, लेकिन इसमें इस बात का ध्यान नहीं रखा गया है कि इस इलाके में भारी तादाद में जंगलों की कटाई और भूमि पथरीली होने के कारण नालों और नदियों में लगातार पानी नहीं रहता।

इस बात का भी ध्यान नहीं रखा गया कि मोटरों को चलाने के लिये लगातार बिजली भी उपलब्ध नहीं होगी। भविष्य में पानी और बिजली की अनुपलब्धता के बारे में इस अदूरदर्शिता के कारण ये योजनाएं असफल हुई हैं और संकट में जी रहे भीलों को और भी कठिनाई में डाल दिया है। ये ही वे योजनाएं हैं जिन्होंने पानी को बिक्री की वस्तु बनाया है और भील आदिवासियों को हाशिये पर ढकेल दिया है। इन कर्जों को चुकाने में असमर्थता की समस्या की जड़ में ये बातें ही हैं।

1975 के साल में पूरे देश में आदिवासी इलाकों में विकास की आम असफलता का

आकलन किया गया था। यह असफलता वैसी ही थी जैसी पश्चिमी मध्यप्रदेश में भीलों के इलाके में हुई थी। तब भारत सरकार ने एक नयी आदिवासी उप योजना लागू की, जिसके अन्तर्गत विकास के तीन विशेष सेक्टरों– कृषि–विकास, शिक्षा और स्वास्थ्य– में विशेष कार्यक्रम शुरू किये गये थे (शर्मा, 2001)। ग्रामीण विकास को एक नयी गति देने के लिये 1982 में नेशनल बैंक फार एग्रीकल्चर एण्ड रूरल डेवलपमेन्ट का गठन किया गया था और गरीबी रेखा से नीचे के परिवारों को सबसिडी वाले ऋण देने के लिये नया एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम (Integrated Rural Development Programme -IRDP) शुरू किया गया था, ताकि वे पूरक के रूप में आय बढ़ाने की गतिविधि शुरू कर सकें या खेती की आय बढ़ा सकें। सिंचाई की ज्यादा सुविधाएं देकर आदिवासियों की खेती में सुधार करने के लिये 1989 में झाबुआ जिले में एक नयी योजना शुरू कमी गयी।

झाबुआ जिले की अलीराजपुर तहसील में यह योजना शुरू हुई और नदियों और नालों से सामुदायिक आधार पर पानी खींचने के लिये भारी शक्तिवाली मोटरें और HDPE पाइपलाइन जैसी चीजें उपलब्ध करायी गयीं। नदियों और नालों से दूर के खेतों तक पानी ले जाने का खर्च आदिवासी की आर्थिक क्षमता से ज्यादा है इसलिये वह सिंचाई की सुविधा हासिल नहीं कर सकता। इसलिये IRDP के अन्तर्गत आदिवासियों को मिलने वाले कर्ज को सामूहिक किया गया और सामुदायिक उद्‌वहन सिंचाई योजना शुरू की गयी। यह भी सोचा गया कि इससे आदिवासियों में सहकारिता की भावना को भी बढ़ावा मिलेगा। योजना को शुरू में मिली सफलता के कारण जिला प्रशासन ने योजना को पूरे जिले में बड़े पैमाने पर फैलाया। इसके कारण यह योजना सभी जिलों में लागू की गयी। योजना लागू होने के एक दशक बाद यह स्पष्ट हो गया कि हालांकि कुछ दुर्लभ जगहों पर मिली सफलता को छोड़कर ज्यादातर योजनाएं असफल हो गयी हैं।

परिणाम यह हुआ कि असफल योजानाओं के आदिवासी सदस्यों के कंधों पर कर्ज का भारी बोझ आ पड़ा और इन भारी कर्जों को चुकाने की तलवार उन पर लटकने लगी। उनके सिर पर यह संकट आ गया कि कर्ज न चुकाने पर उनकी जो कुछ थोड़ी बहुत जमीन थी उसे जब्त कर लिया जायेगा। नीचे सारिणी 4 में योजना की असफलता और उदवहर सिंचाई योजना के बकाया कर्ज का जो विवरण दिया गया है उससे समस्या की गंभीरता का पता चलेगा।

सारिणी 4 : झाबुआ में उद्वहन सिंचाई योजना के हितग्राहियों पर कर्ज

कर्जदारों की श्रेणी	योजनाओं की संख्या	स्वीकृत निवेश (लाख रु.)			बकाया राशि (लाख रु.)	बकाया प्रारंभिक ऋण का अनुपात (%)	प्रति सदस्य औसत बकाया (रु.)	योजनाओं की कुल संख्या का अनुपात (%)	कुल बकाया राशि का अनुपात (%)
		योग	अनुदान	ऋण					
प्रति सदस्य 10 हजार रु. से ज्यादा बकाया	301	967.59	458.06	509.55	1056.55	207.3	24012	35.16	80.1
प्रति सदस्य 10 हजार रु. से कम बकाया	478	714.93	398.41	316.52	262.46	82.9	5563	55.84	19.9
कोई बकाया नहीं	77	95.51	48.11	47.40	0	0	0	9.00	0
योग	**856**	**1778.03**	**904.58**	**873.47**	**1319.01**	–	–	–	–

स्रोत : ऋणदाता बैंक के अभिलेखों से सम्पर्क द्वारा संकलित।

मुट्ठी भर योजनाओं को छोड़कर बाकी सभी योजनाएं नहीं चलीं और 81 प्रतिशत योजनाओं का कर्ज बकाया था। जो 9 प्रतिशत अपना कर्ज चुका सकीं वे ऐसा इसलिये कर सकी कि उन्होंने किसान क्रेडिट कार्ड योजनाओं के जरिये अपने कर्जों को फिर से नियोजित किया। इससे हालांकि उने उदवहन सिंचाई योजना का खाता बन्द हो गया लेकिन वे अभी भी बाद वाली योजना के अन्तर्गत कर्जदार बने रहे। 80.1 प्रतिशत कर्जदार तो वे थे जिन पर 10 हजार से ज्यादा कर्ज था और उनमें से हरेक पर औसत बकाया रु. 24012 था। यह देखते हुए कि इनमें से ज्यादातर लोगों की सालाना आय दस से पन्द्रह हजार रुपये थी, यह उन पर बहुत भारी कर्ज था। इस बकाया कर्ज का मतलब यह भी था कि ये गरीब आदिवासियों को सस्ता संस्थागत कर नहीं मिल सकेगा और उन्हें अब शोषक साहूकारों पर ही निर्भर रहना होगा। सबसे ज्यादा परेशानी की बात यह थी कि सात साल में 856 योजनाओं में 17 करोड़ 78 लाख रुपयों का निवेश किया गया था, जो एकदम बेकार चला गया और उससे टिकाऊ रूप से सिंचाई का रकबा एक हेक्टेयर भी नहीं बढ़ा।

1980 के दशक से ही भील आदिवासियों के कई जनसंगठन झाबुआ जिले में हाशिये पर रखे जाने के विभिन्न मुद्दों के खिलाफ आन्दोलन करते आ रहे थे। इसमें

नर्मदा नदी पर सरदार सरोवर बांध के निर्माण के खिलाफ नर्मदा बचाओ आन्दोलन का लम्बा संघर्ष भी शामिल था। (राहुल, 1997 पूर्वोक्त कृति)। असफल उदवहन सिंचाई योजनाओं की बकाया राशि की वसूली के लिये प्रशासन का कदम आदिवासियों के प्रति की जा रही अनियमितताओं और अन्याय की लम्बी श्रंखला की अन्तिम कड़ी के रूप में आया। उदवहन सिंचाई योजनाओं की असफलता के वास्तविक कारण जानने के लिये लोक जागृति मंच ने 2004 में पूरे जिले में गांवों में कई सामूहिक बैठकें आयोजित कीं। इन समूह बैठकों से पता चला कि योजनाओं के असफल होने के मुख्य कारण ये थे–

1. नालों और माही नदी पर भारी संख्या में उदवहन सिंचाई योजनाओं और जलग्रहण क्षेत्र में लगातार जंगल कटने से योजनाओं के लिये मुख्य जलस्रोत नाले और यहां तक कि माही नदी भी कुछ सालों में ठण्ड में भी सूख गये, जबकि उस वक्त सिंचाई की सबसे ज्यादा जरूरत होती है। इसलिये पहले साल के या दो साल के बाद ज्यादातर योजनाओं ने काम नहीं किया जबकि कुछ योजनाएं तो बिलकुल नहीं चलीं।

2. मोटर पम्पों को बहुत अनियमित रूप से बिजली मिल रही थी और जो मिलती थी वह इतने कम वोल्टेज की होती थी कि शक्तिशाली मोटरें या तो चल ही नहीं पाती थीं या जल जाती थीं। इसके अलावा 1994 के बाद से सरकार ने पांच हार्सपावर तक की मोटरों का उपयोग करने वाले किसानों को मुफ्त बिजली और कुए खोदने के लिये अनुदान देना शुरू कर दिया। इसलिये उदवहन सिंचाई योजना की शक्तिशाली मोटरों को चलाना आर्थिक रूप से नुकसानदायक हो गया और ज्यादातर किसानों ने अपने छोटे मोटर पंप लेना और खुद के कुए विकसित करना शुरू कर दिया। इस कारण बिजली के वितरण पर बोझ बढ़ गया और इससे बिजली के प्रदाय की गुणवत्ता भी घट गयी।

3. सरकार के अर्हता प्राप्त इंजीनियरों ने योजनाओं की डिजाइन नहीं बनायी थी और उसके स्थान पर सामग्री का प्रदाय एड हॉक आधार पर साहूकारों द्वारा किया गया, जो गांव में आ गये थे और योजना के लिये आवेदन करने के लिये ग्रामीणों को एकत्र किया था। साहूकारों ने सभी कागजी कार्यवाही की और यहां–वहां भागदौड़ की और कर्ज देने वाले बैंकों और सरकारी

अधिकारियों की साझेदारी में पूरी राशि सम्हालते रहे। इस प्रकार जो भी सामग्री प्रदाय की गयी वह ठीक डिजाइन की नहीं थी और धटिया थी जिससे योजना असफल हुई। योजना को चलाने के लिये आदिवासियों को ठीक तरह से प्रशिक्षण भी नहीं दिया गया।

4. इस प्रकार हितग्राहियों के ऊपर जो कर्ज थोपा गया वह उनकी सालाना आय से बहुत ज्यादा था और इस कारण इससे शुरू से ही उन पर भारी वित्तीय भार पड़ गया।

अभियान के सामने जो सबसे केन्द्रीय समस्या थी उसे इस प्रकार बताया जा सकता है–

सामुदायिक उदवहन सिंचाई योजनाओं के हितग्राही भीलों पर ऐसी योजनाओं के थोपे गये ऋण के बकाया कर्ज का भार आ गया, जिन योजनाओं ने कभी ठीक से काम नहीं किया था, क्योंकि संबंधित सरकारी एजेन्सियों और गैर आदिवासी सप्लायरों ने गलत तरीके से योजना बनायी थी और उसे कियान्वित किया था। यह सब इस इलाके के लिये अनुपयुक्त विकास नीति के व्यापक संदर्भ में हुआ था।

पीपलीपाड़ा की दुखद कहानी

''मेरे खेत में एक कुआ था जिससे मुझे रबी के मौसम में करीब एक क्विंटल मक्का पैदा करने के लिये कुछ पानी मिल जाता था। एक दिन पेटलावद का एक व्यापारी पटवारी के साथ हमारे गांव आया और मुझे बताया कि वे गांव से 6 किलोमीटर दूर स्थित माही नदी से पानी लायेंगे और मैं टनों मक्का और गेहूं पैदा कर सकूंगा।'' नाथू गंगाराम ने बताया, जो झाबुआ जिले की पेटलावद तहसील के पीपलीपाड़ा गांव में रहने वाला एक भील आदिवासी था। उसने आगे बताया कि व्यापारी-पटवारी जोड़ी ने गांव के दूसरे लोगों को भी ये सपने दिखाये और यह भी कहा कि इस योजना में लगने वाला सारा पैसा एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत झकनावदा का सहकारी बैंक देगा, जिसका 50 प्रतिशत तो अनुदान के रूप में होगा और बाकी राशि कम ब्याज पर वापिस लौटानी होगी।

हालांकि 1996 की गर्मी में 93 घरों के ज्यादातर निर्णायक सदस्य मजदूरी के लिये मौसमी पलायन में गुजरात चले गये थे, वयापारी और पटवारी ने उन लोगों की एवज में गांव के बाकी बचे लोगों से कर्ज के कागजों पर दस्तखत करा लिये। इस प्रकार माही नदी से पीपलीपाडा गांव

के 200 हेक्टेयर जमीन की सिंचाई के लिये विशाल उदवहन योजना चालू हो गयी। इस भूभाग का और पानी उठाने की प्रणाली का सर्वेक्षण करने के लिये कोई इंजीनियर नहीं आया। इसके स्थान पर व्यापारी ने खुद डिजाइन तैयार किया और यह तय किया कि तीस हार्सपावर की तीन मोटरों की जरूरत होगी और उसने पीपलीपाडा में पानी लाने के लिये पाइपलाइन की प्रणाली को भी डिजाइन कर लिया। गांव के लोगों ने पाइपलाइन डालने के लिये नाली खोदने का कठिन श्रम किया और एक दिन उदवहन प्रणाली को शुरू करने के लिये सब तैयारी हो गयी।

जैसे ही एक मोटर चालू हुई वैसे ही तेजी से निकलने वाले पानी के दबाव से पाइपलाइन फट गयी और मोटर को तुरन्त बन्द करना पड़ा। इस तरह की छोटे आकार की पाइपें लगायी गयीं थीं कि वे तीस हार्सपावर की एक मोटर से आने वाले पानी को भी नहीं बर्दाश्त कर पायीं, तीनों मोटरों को साथ चलाने की तो बात ही छोड़ दें। इससे व्यापारी और ग्रामीणों के बीच में विवाद शुरू हो गया। कोशिश करने पर भी व्यापारी समस्या को हल नहीं कर पाया और जब भी मोटर शुरू की जाती, पाइप कहीं न कहीं से फट जाता। इस प्रकार एक बूंद पानी भी पीपलवाड़ा नहीं आया। व्यापारी ने ग्रामीणों को पम्पहाउस सौंपने के पहले वहां एक आदिवासी को चौकीदार के रूप में रखा था।

जब विवाद बढ़ गया तो उसने चौकीदार को उकसाया कि वह पुलिस में मामला दर्ज करा दे कि ग्रामीण पम्प की मोटर और उसके स्टार्टर से छेड़खानी कर रहे हैं जिससे योजना असफल हो जाये। बाद में अपने सभी बिलों का भुगतान पाने के बाद वह एकदम गायब हो गया और पीपलवाड़ा के ग्रामीणों पर 35 लाख रुपयों के सामूहिक कर्ज का भार आ गया जो बाद में बढ़कर करीब 55 लाख हो गया क्योंकि उदवहन सिंचाई योजना के काम न करने से ग्रामीण कुछ भी नहीं चुका पाये थे।

योजना की अनुपयुक्तता का परिचय कर्जदार घरों की आर्थिक दशा के विश्लेषण से मिल सकता है। गांव में नीचे लिखे अनुसार 9 भूमिहीन, 20 सीमान्त (0-1 हे.), 46 छोटे (1-2 हे.), 17 अर्द्ध मध्यम (2-4 हे.), और 1 मध्यम (4-10 हे.) के घर हैं।

इस प्रकार 80 प्रतिशत घर छोटे किसान की श्रेणी के नीचे के हैं और भू स्वामित्व का औसत 1.6 हे. है। सभी अर्द्ध-मध्यम और एकमात्र मघ्यम किसान का घर असल में संयुक्त परिवार हैं। परिवार का औसत आकार 6.4 तक है, जैसा कि चित्र 2 में बताया गया है, प्रति व्यक्ति

भूमि बहुत कम है और इसका औसत 0.26 हे. आता है। ऐसे सिर्फ 14 किसान हैं जो अपनी कुछ जमीन की सिंचाई करते हैं और औसत सिंचित जमीन बहुत कम अर्थात 0.9 हे. है।

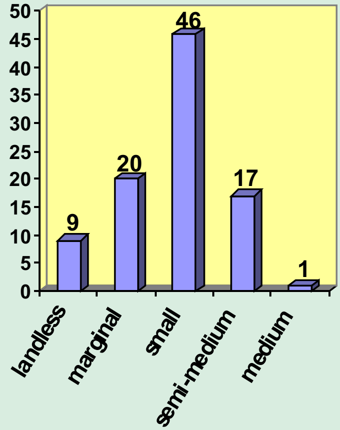

Fig. 1 : Land Distribution of Loanees

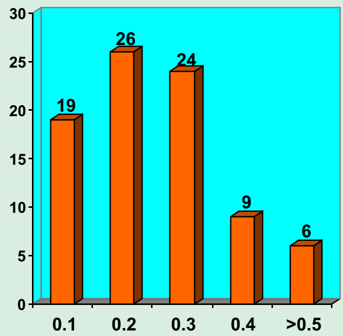

Fig. 2 : Landholding per capita (hectares)

परिवारों की औसत सालाना आय सिर्फ 9370 रुपये है जबकि उदवहन सिंचाई योजना कामूलधन 38570 रुपये है जिसमें कर्ज और आय का अनुपात 4.7 है। कोई भी बैंक अपने होशो-हवाश में कर्ज और आय के ऐसे अनुपात में कर्ज नहीं देगा। फिर भी इस मामले में कर्ज दिये गये, जिससे साफ पता चलता है कि व्यापारी ने पटवारी और बैंक अधिकारियों के साथ मिलकर भ्रष्टाचार किया है। कर्जदारों की आय की दयनीय हालत का अनुमान इस बात से भी लगाया जा सकता है कि औसत रूप से वे साल में साढ़े पांच माह अपने गांवों के बाहर पलायन करके मजदूरी करते हैं।

यह उदवहन सिंचाई योजनाओं के अन्तर्गत आदिवासियों के विकास के लिये तय किये गयी राशि के गबन के कई मामलों में से सबसे ज्वलंत उदाहरण है। यह बताता है कि आदिवासियों के साथ धोखाधड़ी करने में नौकरशाही और व्यापारी की किस प्रकार सक्रिय मिलीभगत थी। जो लोग इस धोखाधड़ी के शिकार हुए वे हमेशा की तरह आदिवासी ही थे जो कालीसूची में डाल दिये गये और पन्द्रह सालों से ज्यादा के लिये वे बैंक की राशि से वंचित रहे। इसके अलावा बैंक अधिकारियों ने समय-समय पर उनकी बकरियां, बैल और मुर्गियां जब्त कर लीं और इसका कोई लेखा जोखा नहीं रखा गया। यह एक जीवित दुखद प्रसंग था।

2.4 उद्देश्यों का विश्लेषण

ऊपर के विश्लेषण से विभिन्न समस्याओं की व्यवस्थित रूप से पहचान हो जाती है और उनका श्रेणीकरण भी हो जाता है और यह भी स्पष्ट हुआ है कि उनका आपस में तथा उनका केन्द्रीय समस्या से रिश्ता क्या था। अब अभियान के उद्देश्यों का विश्लेषण किया जायेगा। अभियान का लक्ष्य यह था–

उदवहन सिंचाई योजना के काम न करने के कारण आदिवासियों के कर्ज की तुरन्त माफी हासिल करना और आगे के लिये यह सुनिश्चित करना कि पश्चिमी मध्यप्रदेश में भीलों के आवासक्षेत्र की ऊपरी जलग्रहण वाली शुष्क भूमि (upper watershed dry land areas) के लिये ज्यादा सहभागी, न्यायपूर्ण, समतावादी और टिकाऊ नीति बनाये जाना सुनिश्चित किया जाना।

समस्या के विश्लेषण से यह साफ प्रकट हो गया है कि केन्द्रीय समस्या का नजदीकी रिश्ता उन विभिन्न समस्याओं से है जिनका सामना भील आदिवासियों को करना पड़ता है। इसलिये यह लक्ष्य तभी टिकाऊ रूप से हासिल किया जा सकता है जब नीचे लिखे तरीके से विभिन्न उद्देश्यों को पूरा किया जायेगा–

1. यह तथ्य स्थापित करना कि उदवहन सिंचाई योजना सरकारी एजेन्सियों और सप्लायर की गलती के कारण ही असफल हुई।
2. यह स्थापित करना कि सरकार अपने खुद के कानूनों और नीतियों के द्वारा अपने हिस्से की प्रशासनिक असफलता की वित्तीय जिम्मेदारी वहन करने के लिये बाध्य है।
3. इस इलाके में प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन की एक वैकल्पिक व्यवस्था स्थापित करना जो ज्यादा टिकाऊ और सहभागिता वाली हो।
4. साहूकारों के संदर्भ में आदिवासियों की आर्थिक स्वतंत्रता स्थापित करना।
5. आदिवासियों की राजनीतिक शक्ति स्थापित करना ताकि फिलहाल उदवहन सिंचाई योजना के कर्ज को माफ करने के लिये और दीर्घकाल के लिये ज्यादा समतावादी और टिकाऊ विकास की नीतियां अपनाने के लिये सरकार पर दबाव बना सकें।
6. आदिवासियों का पारम्परिक सामाजिक नेटवर्क पुनर्जीवित करना ताकि

उनकी खोई हुई सामाजिक पूंजी फिर से निर्मित हो सके और हानिकारक सामाजिक रिवाजों को कमजोर किया जा सके।

7. भील समाज में महिलाओं की स्थिति में सुधार करना।

8. शिक्षा, स्वास्थ्य और सेवाओं की स्थिति में सुधार करना।

3. रणनीति का विश्लेषण

प्रोजेक्ट का लक्ष्य और उसे हासिल करने के माध्यमो का विवरण दिये जाने के बाद उन रणनीतियों का वर्णन करना जरूरी है जिन्हें इन उद्देश्यों को हासिल करने के लिये अपनाया गया था। नीचे इन रणनीतियों का विवरण दिया गया है। ये अभियान की कामयाबी के लिये जरूरी थीं क्योंकि ये एक दूसरे की पूरक हैं और ये सब मिलकर एक समग्र कार्यक्रम बनाती हैं, जिसकी मुख्य धुरी अधिकारों के मुद्दे को लेकर जनता का जुड़ाव (मोबिलाइजेशन) है।

3.1 कानूनी पैरवी

भारत के मध्य भाग में रहने वाले आदिवासियों के पक्ष के सबसे ताकतवर प्रावधान वे हैं जो संविधान की पांचवीं अनुसूची में दिये गये हैं जिन्हें ''संविधान के भीतर संविधान'' कहा गया है (शर्मा, पूर्वोक्त कृति)। इसमें मध्यप्रद्रेश के समान पांचवीं अनुसूची के राज्य में आदिवासी इलाकों को अनुसूचित क्षेत्र घोषित किया गया है और अनुसूचित जनजाति के विधायकों की एक जनजाति सलाहकार परिषद बनायी गयी है जो राज्य के राज्यपाल को सलाह देगी। राज्यपाल को इन अनुसूचित इलाकों के प्रशासन पर नजर रखने की जिम्मेदारी दी गयी है। अनुसूची की सबंधित धारा में यह कहा है–

(1) इस संविधान में कुछ भी होने के बावजूद, राज्यपाल सार्वजनिक अधिसूचना के जरिये यह निर्देश दे सकते हैं कि संसद का या राज्य की विधान सभा का कोई विशेष कानून किसी अनुसूचित क्षेत्र या उसके किसी भाग में राज्य में लागू नहीं होगा या किसी अनुसूचित क्षेत्र या उसके किसी भाग में राज्य में लागू होगा इस परन्तुक और संशोधन के साथ जिसका उल्लेख वे अधिसूचना में करें और इस उप–कण्डिका के अन्तर्गत कोई भी निर्देश दिया जा सकता हैं जो पिछली तारीख से लागू हो सकता है।

(2) राज्य में फिलहाल जो अनुसूचित क्षेत्र हैं उनमें से किसी के लिये भी राज्यपाल शान्ति और अच्छी सरकार के लिये नियम बना सकते हैं।

खास तौर से और पहले उल्लिखित शक्ति के प्रति बिना किसी पूर्वाग्रह के, ऐसे नियम नीचे लिखे काम कर सकते हैं–

क. ऐसे इलाके में अनुसूचित जनजाति के सदस्यों के द्वारा या उनमें भूमि के स्थानान्तरण को रोक सकते हैं।

ख. ऐसे इलाके में अनुसूचित जनजाति के सदस्यों को भूमि के आवण्टन का नियमन कर सकते हैं।

ग. ऐसे इलाके में अनुसूचित जनजाति के सदस्यों को धन उधार देने वाले लोगों के साहूकारी के धन्धे का नियमन कर सकते हैं।

(3) जैसा कि इस कण्डिका की उप–कण्डिका 2 में बताया गया है ऐसे नियम बनाने में, राजयपाल संसद या राज्य विधान सभा के किसी भी अधिनियम को या ऐसे इलाके में फिलहाल लागू किसी भी मौजूदा कानून को रद्द कर सकते हैं।''

इस प्रकार सैद्धान्तिक रूप से राज्य के राज्यपाल के लिये यह संभव है कि वे जनजाति सलाहकार परिषद की सलाह पर भारतीय वन अधिनियम और भू अधिग्रहण अधिनियम के लागू होने को रोक सकते हैं या उसे रद्द कर सकते हैं। हालांकि, ऐसा कभी नहीं हुआ क्योंकि यह बाध्यकारी प्रावधान नहीं है और यह राज्य की नीति के निर्देशक सिद्धान्तों जैसा सुझाव मात्र है, जो अपने क्रियान्वयन के लिये अन्ततः कार्यपालिका पर ही निर्भर रहता है। और चूंकि आदिवासी निर्वाचित प्रतिनिधियों में आवश्यक राजनीतिक समझ और शक्ति नहीं है, वे इस शक्तिशाली प्रावधान को लागू करने के लिये राज्य पर दबाव डालने में असफल रहे हैं।

समता नामक एक संस्था ने आन्ध्रप्रदेश सरकार के इस निर्णय को उच्चतम न्यायालय में चुनौती दी जिसमें अनुसूचित आदिवासी इलाके में खनिज निकालने के लिये एक निजी कम्पनी को लीज दी गयी थी। इस पर माननीय उच्चतम न्यायालय ने संविधान सभा की चर्चा के प्रकाश में कहा कि पांचवीं अनुसूची का प्रारूप बनाते समय संविधान के निर्माताओं का मन्तव्य आदिवासियों की जमीन छीनी जाने से उनकी रक्षा करना था और हालांकि संविधान में वास्तविक शब्द यह है कि

राज्यपाल उनके लाभ के लिये ऐसा ''कर सकते हैं'' इसके बदले उसे ''ऐसा करेंगे'' पढ़ा जाना चाहिये। इस प्रकार न्यायालय ने आदिवासियों की भूमि गैर–आदिवासियों को स्थानान्तरित होने से प्रभावी ढंग से रोक दिया। (समता बनाम आन्ध्रप्रदेश राज्य, 1997 8 एस सी सी 191)। समता की इस ठोस कानूनी कार्यवाही से प्रेरणा लेकर सम्पर्क के कार्यकर्ताओं ने भी परिश्रमपूर्वक अनुसंधान करके यह पाया कि मध्यप्रदेश में भी पांचवीं अनसूची के प्रावधानों के अन्तर्गत एक नियम है कि यदि आदिवासियों को विभिन्न योजनाओं के अन्तर्गत कर्ज दिये गये हैं और उनकी गलत योजना और गलत कार्यान्वयन के कारण उन्हें लाभ नहीं मिल पा रहा है तो राज्य उन्हें ऐसे कर्ज चुकाने से मुक्त कर देगा।

मध्यप्रदेश डिटरमिनेशन आफ लायबिलिटी रूल्स 1979 मध्यप्रदेश शासन के अनुसूचित जनजाति और अनुसूचित जाति कल्याण विभाग द्वारा बनाये गये थे जो राज्य के पांचवीं अनुसूची वाले आदिवासी इलाकों में लागू होने थे और इनमें यह माना गया था कि– ''जब तक आदिवासी आर्थिक प्रणाली के कामकाज की की औपचारिकताओं और जटिलताओं से परिचित नहीं हो जाते तब यह जरूरी है कि अज्ञात और अनियमित देनदारियों से उनकी रक्षा की जाये और ऐसी देनदारियों के संबंध में सीधे–सादे आदिवासियों और ताकतवर वित्तीय संस्थाओं के बीच के विवादों को निपटाने के लिये एक उच्च स्तरीय प्रणाली की जरूरत है''। ये नियम यह प्रक्रिया कायम कर सकते हैं कि यदि निर्णायक रूप से यह सिद्ध हो जाता है कि योजना की असफलता के लिये आदिवासी जिम्मेदार नहीं हैं तो सामाजिक न्याय के कदम के रूप में उन्हें ऐसी देनदारी से मुक्त कर दिया जायेगा।

इस महत्वपूर्ण प्रावधान को कर्ज मुक्ति के लिये किये जाने वाले अभियान का आधार बनाया गया। इस प्रकार लोक जागृति मंच ने सरकार से कहा कि सरकार अपने खुद के कानून और नियमों को आदिवासियों के अधिकार के रूप में लागू करे न कि एक बार के लिये विवेकाधीन या कल्याणकारी कदम के रूप में कर्ज माफ करे।

3.2 जनता का जुड़ाव

इस नियम के कार्यान्वयन के लिये जो अत्यन्त महत्वपूर्ण रणनीति थी वह थी जनता की कार्यवाही। 2005 में कर्ज से प्रभावित आदिवासियों का एक संगठन लोक जागृति मंच के तत्वावधान में बनाया गया जिसका नाम था ''उदवहन सिंचाई पीड़ित हितग्राही संघ''। इस संगठन ने उन गांवों में बैठकें आयोजित कीं, जो

उद्वहन सिंचाई योजना की असफलता से प्रभावित थे। इस काम में संगठन को भारी जन समर्थन मिला। फिर ग्राम सभा आयोजित करने और गलत क्रियान्वयन के कारण उदवहन सिंचाई योजना की असफलता के बारे में संकल्प पारित करने का काम किया गया और इन्हें बार–बार जिला प्रशासन के समक्ष प्रस्तुत किया गया। पहले तो जिला कलेक्टर ने इन आवेदनपत्रों पर ध्यान नहीं दिया लेकिन जब दबाव बढ़ने लगा और उन्हें उनके दौरों के दौरान नाराज ग्रामीणों द्वारा लगातार घेराव किया गया और कार्यवाही की मांग की गयी तब उन्होंने जांच कराने का आश्वासन तो दिया लेकिन कुछ किया नहीं। अन्त में जनवरी 2006 में सात सौ प्रभावित किसान जमा हुए और एक शपथपत्र पर हस्ताक्षर किया कि यदि उनके बेजा कर्ज को माफ नहीं किया गया तो वे सामूहिक रूप से आत्म हत्या कर लेंगे और उसे भारत के राष्ट्रपति और मध्यप्रदेश के राज्यपाल तथा मुख्यमंत्री को भेजा। अन्त में लोक जागृति मंच को पूरे मध्यप्रदेश के अन्य जन संगठनों का सहयोग लेना पड़ा और भोपाल में तीन दिन का धरना देना पड़ा जिसमें पूरे राज्य से हजारों किसानों ने भाग लिया।

इससे मुख्यमंत्री किसानों के प्रतिनिधियों से मिलने के लिये सहमत हुए और उस बैठक में उन्होंने आश्वासन दिया कि वे झाबुआ का भ्रमण करेंगे और पूरी उद्वहन सिंचाई योजना के क्रियान्वय का विस्तृत जायजा लेंगे। इसके बाद मई 2006 में झाबुआ के जिला मुख्यालय में किसानों की एक विशाल रैली आयोजित की गयी जिसमें हजारों किसानों ने भाग लिया ताकि प्रशासन पर इस बात का दबाव पड़े कि वह उद्वहन सिंचाई योजना की असफलता की जांच करने के लिये जो नियम हैं उनके अन्तर्गत एक सरकारी समिति बनाए। इसका अच्छा प्रभाव हुआ और असफलता के वास्तविक कारणों की पहचान और वेरीफिकेशन करने की प्रक्रिया शुरू हो गयी।

डिप्टी कलेक्टर पी. एस. करमा की प्रधानता वाली जांच समिति ने अपनी विस्तृत रिपोर्ट में योजना की असफलता के लिये नीचे लिखे कारण बताये–

1. सिंचाई योजनाएं तकनीकी रूप से सक्षम एजेन्सी के द्वारा नहीं बनायी गयी थीं।
2. योजनाओं के लिये कोई ड्राइंग नहीं बनायी गयी थी।
3. प्रशासन ने टेण्डर की वांछित प्रक्रिया के बाद किसी सक्षम कार्यान्वयन एजेन्सी के साथ प्रशासन का कोई लिखित करार नहीं हुआ था।

4 काम ज्यादातर बारिश के मौसम में शुरू हुआ।

5 आदिवासियों को योजनाओं को चलाने के लिये न तो प्रशिक्षित किया गया था और न उन्हें कोई मार्गदर्शन मिला था।

6 ब्लाक के अधिकारियों ने योजनाओं के कार्यान्वयन की मानीटरिंग और मूल्यांकन नहीं किया।

7. हितग्राहियों की सूची में भूमिहीन लोग भी शामिल किये गये थे।

समिति ने सिफारिश की कि जिस सब–इंजीनियर पर योजना का रूपांकन करने, उसकी मानीटरिंग करने और मूल्यांकन करने की जिम्मेदारी थी उस पर और जिन व्यापारियों ने सप्लायर बनकर योजना को कार्यान्वित किया था उन पर प्रशासन को कार्यवाही करना चाहिये। इसके बाद ग्राम सभा के द्वारा पारित संकल्पों और जांच समिति के निष्कर्षों का उल्लेख करते हुए और उद्‌वहन सिंचाई योजना के हितग्राहियों पर कर्ज माफ करने की सिफारिश की प्रस्तुति की प्रक्रिया शुरू हो गयी। जून 2007 में जब मुख्यमंत्री झाबुआ जिले के दौरे पर आये तो उनहोने दोषी अधिकारियों तथा सप्लायरों पर आपराधिक मुकदमा दर्ज करने का आदेश दिया। इसके साथ ही कर्ज माफी का अभियान सफलता पूर्वक समाप्त हो गया।

3.3 सहभागी अनुसंधान

जब अभियान में कर्ज माफी की मांग की गयी तो शुरू में सरकार ने आदिवासियों को ही दोषी ठहराया। इसीलिये यह जरूरी हो गया कि एक विस्तृत प्रश्नावली–सर्वेक्षण के जरिये व्यवस्थित तरीके से आंकड़े एकत्र किये जायें और उनका विश्लेषण किया जाये ताकि उदवहन सिंचाई योजना की असफलता के कारणों की पुष्टि हो सके और यह देखा जा सके कि आदिवासी अपनी असफलता के लिये जिम्मेदार हैं या नहीं। सम्पर्क संस्था ने प्रभावित आदिवासियों के साथ अध्ययन हाथ में लिया। समय और संसाधनों की सीमाओं को देखते हुए लगा कि ऐसा अध्ययन एक ही तहसील में किया जा सकता है और वह भी पेटलावद तहसील में लागू हुई कुल 81 योजनाओं में नमूने की योजनाओं का।

नौ योजनाएं नमूने के रूप में गहन अध्ययन के लिये चयनित की गयीं। इसके लिये 81 योजनाओं को उनके आकार के अनुसार तीन भागों में बांटा गया– 12 या कम सदस्यों की 28 योजनाएं, 13 से 20 सदस्यों वाली 28 योजनाएं और 21 या ज्यादा

सदस्यों वाली 25 योजनाएं। आकार के अनुसार यह बंटवारा बहुत महत्व का था क्योंकि पिछले अनुभव ने बताया है कि ऐसी योजनाओं का आकार बढ़ने पर तकनीकी और सामाजिक समस्याएं बढ़ जाती हैं। इनमें से हर वर्ग की तीन योजनाएं चयनित की गयीं। इसके अलावा इस नमूने को ऐसा चुना गया था कि सामाजिक जाति और आयवर्ग का वितरण भी उससे पता चले। नमूने में विभिन्न प्रकार के जलस्रोत, जैसे, तालाब, नाले, कुओं का ठीक से प्रतिनिधित्व था। दो सफल योजनाएं हैं, एक तो भील आदिवासियों की और दूसरी किसानों की पिछड़ी जाति पाटीदारों की। नमूने में कुछ सात असफल योजनाएं थीं, जो ज्यादातर भील आदिवासियों की और कुछ दलितों तथा बंजारों की थीं। कुल 279 परिवार थे जिन्होंने कर्ज लिया था लेकिन विभिन्न कारणों से उनमें से 18 ने प्रश्नावली सर्वेक्षण का जवाबन नहीं दिया था इसलिये विश्लेषण सिर्फ 261 परिवारों के जवाबों के आधार पर किया गया है।

एक सांख्यिकी मल्टीपल लीनियर रिग्रेशन विश्लेषण (statistical multiple linear regression analysis) यह तय करने के लिये किया गया कि किन तत्वों के कारण उद्वहन सिंचाई योजना असफल हुई। इससे पता चला कि योजना की सफलता या असफलता को तय करने वाला सबसे महत्वपूर्ण तत्व था सिंचाई का स्रोत। क्योंकि तालाब जैसे बारहमासी स्रोत से सफलता मिली जबकि माही नदी या मौसमी नाले से असफलता मिली। यह इस बात को रेखांकित करता है कि अर्द्ध–शुष्क और जलग्रहण के उपरी इलाके में जल स्रोत की योजना ठीक से बनाया जाना चाहिये। भील आदिवासी प्राकृतिक प्रक्रियाओं के बारे में अपने अन्तर्ज्ञान से पारंपरिक रूप से ऐसा करते रहे हैं किन्तु डिजाइन बनाने वाले आधुनिक लोगों ने उद्वहन सिंचाई योजनाओं में इन अत्यन्त तार्किक पर्यावरणीय सिद्धान्तों पर ध्यान देने की चिन्ता नहीं की। दूसरा अत्यन्त महत्वपूर्ण तत्व था उद्वहन सिंचाई योजना के सहजकर्ता (फेसिलिटेटर) याने योजना को कार्यान्वित करने वाले लोग। जहां सरकारी अधिकारियों ने कर्ज की प्रक्रिया तय की और योजना के कार्यानवयन को मानीटर किया वहां योजनाएं सफल हुईं, लेकिन जहां साहूकारों पर जिम्मा छोड़ा गया वहां योजनाएं असफल हो गयीं। कर्ज और आय का आपसी अनुपात भी महत्वपूर्ण तत्व था। क्योंकि यह अनुपात जितना उंचा होगा, सफलता की संभावना उतनी ही कम होगी। अन्त में हितग्राहियों का शैक्षणिक स्तर भी एक महत्वपूर्ण तत्व था क्योंकि जो लोग निरक्षर थे वे नयी योजना को और

उसके परिचालन की जरूरतों को समझ नहीं पाये और उन्हें कोई प्रशिक्षण नहीं दिया गया। चित्र 5 में की ड्राइवर चार्ट के रूप में परिणाम बताये गये हैं।

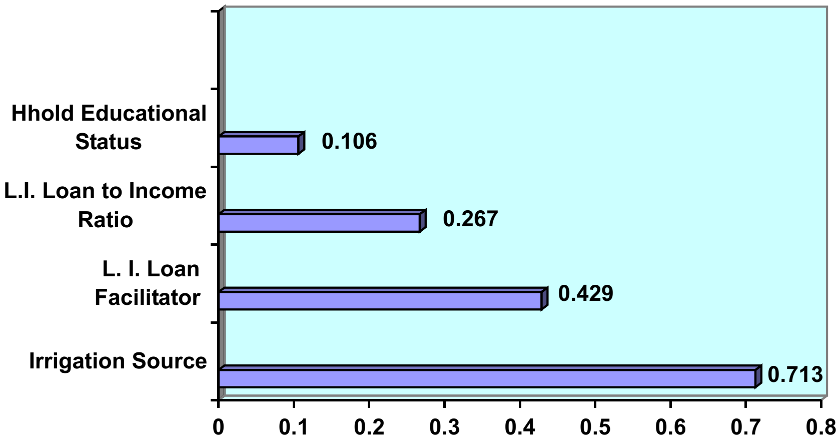

चित्र 5 : उदवहन सिंचाई योजनाओं में निष्पादन के मुख्य—चालक

संपर्क संस्था के निष्कर्षों को विश्लेषणात्मक वजन देने के लिये ये परिणाम एक पुस्तिका के रूप में प्रकाशित किये गये थे और व्यापक रूप से प्रसारित किये गये थे और इस कारण इस मुद्दे पर सरकार पर अतिरिक्त दबाव पड़ा।

3.4 मीडिया एडवोकेसी

छोटे और गरीब किसानों के साथ हुई इस गम्भीर ठगी को लेकर मीडिया ने जर्बदस्त उत्साह दिखाया। दरअसल संस्था के कार्यकर्ताओं ने पीड़ित किसानों को सिर्फ संगठित ही नहीं किया बल्कि उन्हें विभिन्न मंचों पर अपनी बात असरदार ढंग से रखने के हुनर में भी दक्ष किया। इसी का नतीजा निकला कि जब—जब असफल उद्वहन सिचाई परियोजना के पीड़ित हितग्राहियों ने जिलों एवं प्रदेश स्तर पर रैली, धरना आदि आंदोलनात्मक गतिविधियों के माध्यम से अपनी आवाज बुलन्द की तब—तब उन्होंने मीडिया को आंमत्रित कर अपनी बातें उसके समक्ष सफाई से रखीं। इलेक्ट्रानिक तथा प्रिन्ट दोनो तरह के मीडिया तक प्रभावशाली ढंग से अपनी बात पहुंचाना 'उद्वहन सिंचाई परियोजना बेजा कर्ज मुक्ति आन्दोलन' की सुविचारित रणनीति का एक हिस्सा था। ग्रामीणों ने और लोकजागृति मंच के

सदस्यों ने झाबुआ जिले में असफल उदवहन सिंचाई परियोजना की सम्पूर्ण क्रियान्विति का गोरखधन्धा मीडिया के सामने उजागर किया। दिलचस्प स्टोरी की तलाश में रहने वाले मीडिया की रुचि इस प्रकरण को उठाने में जागी और परिणाम यह हुआ कि इस आन्दोलन को इलेक्ट्रानिक और प्रिन्ट दोनों माध्यमों में अच्छी जगह मिली और सरकार पर दबाव बना। जब बेजा कर्ज से पीड़ित 1700 किसानों ने महामहिम राष्ट्रपतिजी से कर्ज माफ करने या खुदखुशी की अनुमति देने की गुहार लगायी तो राष्ट्रीय मीडिया ने इसे अपनी लीड स्टोरी बनाया। सम्पर्क ने जनसूत्र संवाद समिति जैसे स्वतंत्र मीडिया अभिकरण के साथ मिलकर 'जीती जंग, जिन्दगी की' दस्तावेजी फिल्म बनाकर इस मुद्दे को जन–जन तक पहुँचाया। रेडियो, टीवी तथा अखबारों में यह मुद्दा जोर–शोर से उठाया जाना मीडिया एडवोकेसी के मोर्चे पर सफल प्रयास था और इसके परिणाम स्वरूप सरकार पर दबाव बना।

3.5 राजनीतिक नेटवर्किंग

यह अभियान स्थानीय स्तर से लेकर राज्य और राष्ट्रीय स्तर तक राजनीतिक नेटवर्किंग किये बिना सफल नहीं होता।

लोकजागृति मंच ने असफल उद्वहन सिंचाई परियोजना हितग्राही संघ बनाया तथा स्थानीय स्तर पर सरपंच संघ के साथ समन्वय स्थापित किया। राज्य स्तर पर स्वयंसेवी संस्थाओं के फोरम और मध्यांचल फोरम के साथ भी समन्वय स्थापित किया तथा भूमण्डलीकरण विरोधी जन अभियान नेटवर्क के साथ गठजोड़ किया। इसके अलावा बीज स्वराज अभियान, मध्यप्रदेश किसान संघर्ष समिति जैसे संगठनों को साथ लेकर प्रदेश भर में बेजा किसानी कर्जों की माफी हेतु बेजा कर्ज मुक्ति अभियान चलाया गया। यही नहीं, लोक जागृति मंच ने विभिन्न राजनीतिक दलों के उन नेताओं के साथ भी समन्वय स्थापित किया जो ग्रामीणों व आदिवासियों के मुद्दों में रुचि रखते थे। परिणाम यह हुआ कि उद्वहन सिंचाई परियोजना से सम्बन्धित कर्ज का, खास तौर पर किसानों के कर्ज का मामला बार–बार राज्य की विधान सभा की बहस में उभरा।

राष्ट्रीय स्तर पर सम्पर्क संस्था ने भोजन का अधिकार, जलबिरादरी आदि नेटवर्क के माध्यम से इस मुद्दे पर जन समर्थन जुटाया, जिससे सरकार पर दबाव बनाने में सफलता मिली।

3.6 सामाजिक पूंजी का पुननिर्माण

अनुभव ने बताया है कि संगठनात्मक या विकास कार्य से प्राप्त उपलब्धियों को टिकाऊ बनाने के लिये छोटे से इलाके में ही लोगों को जोड़ना काफी नहीं है बल्कि इसके लिये व्यापक नेटवर्क और संस्थाएं बनाना जरूरी है। ये नेटवर्क और संस्थाएं ऐसी होना चाहिये जो बदलाव की एक ऐसी सकारात्मक जवाबी संस्कृति का निर्माण कर सकें जो उन लोगों के नकारात्मक रुख को चुनौती दे सके जो विभिन्न स्तरों पर गरीबों की मुक्ति के खिलाफ खड़े हैं। (युगांधर, 1999)। इस प्रकार ऐसे व्यापक नेटवर्क ''सामाजिक पूंजी'' के जरिये ही बनाये जाने चाहिये (डी सिल्वा और पई, 2003)। इस प्रकार सम्पर्क संस्था ने पारंपरिक सामुदायिक पंचायतों को पुनर्जीवित करने में सहायता की। इन सामुदायिक पंचायतों के जरिये सम्पर्क ने वधू मूल्य को कम कराके और वधू के परिवार द्वारा दूल्हे को दिये जाने वाले अन्य उपहारों को कम कराके ऋणग्रस्तता का बड़ा कारण खत्म किया। इसी प्रकार राखी त्यौहार और मृतक संस्कार में होने वाले खर्च काफी कम कर कराये। इसके अलावा खेती के काम में आपस में श्रम देने का पारम्परिक रिवाज भी फिर से शुरू किया गया जिससे खेती पर होनेवाला खर्च बच गया। इससे अधिकारों से संबंधित मुद्दों के आसपास राजनीतिक लामबंदी के समर्थन में ज्यादा सामाजिक एकजुटता हुई।

3.7 वैकल्पिक विकास कार्यक्रम

1990 के दशक के शुरू में विकेन्द्रीकृत जल संसाधन प्रबंधन के संबंध में पूरे देश में फिर से विचार किया जा रहा था, और तब जलग्रहण क्षेत्र के विकास क लिये पहाड़ी से घाटी का तरीका (रिज टु वैली एप्रोच) लोकप्रिय हुई जो केन्द्रीकृत बेसिन स्तरीय परियोजनाओं के विपरीत थी। इससे योजना बनाने, कार्यान्वयन में और प्रोजेक्ट के बाद उसके रख रखाव में हितग्राहियों का सक्रिय जुड़ाव हुआ (शाह, 1993, भारत सरकार, 1994)। सम्पर्क संस्था ने सरकार और गैर सरकारी धन से कई समग्र वाटरशेड विकास प्रोजेक्ट के कार्यान्वयन किया है। इनमें सबसे महत्वपूर्ण था डेनिश इन्टरनेशनल डेवलपमेन्ट एजेन्सी की आर्थिक सहायता से समग्र वाटरशेड डेवलपमेन्ट प्रोजेक्ट, जिसे मध्यप्रदेश सरकार के सहयोग से कार्यान्वित किया गया। इसमें रु. 5000 प्रति हेक्टेयर की कम लागत पर परियोजना के गांवों में भीलों के लिये पानी की उपलब्धता और आजीविका की सुरक्षा में

महत्वपूर्ण सुधार हुआ। (CWDPMP, 2005)। इस प्रोजेक्ट ने निर्णायक रूप से यह साबित कर दिया है कि उद्वहन सिंचाई योजना का पर्यावरणीय तर्क पूरी तरह से गलत था। इस प्रोजेक्ट ने प्राकृतिक संसाधन के प्रबंधन का एक वैकल्पिक तरीका भी उपलब्ध कराया। इसके अलावा, सरकार से सहयोग करके सम्पर्क संस्था ने स्थानीय स्तर के प्रशासन के इस गलत प्रचार को भी गलत साबित करने में सफलता प्राप्त की कि यह सरकार विरोधी संस्था है। विकास के ऐसे प्रोजेक्टों के कार्यान्वयन ने भी बहुत जरूरी वित्तीय सुरक्षा प्रदान की जो सिर्फ अधिकारों के लिये अभियान करके हासिल नहीं होता। इस प्रकार विकास कार्य किसी भी अधिकार अभियान की समग्र रणनीति का महत्वपूर्ण सहयोगी अंग होते हैं। इसके बिना अभियान टिकाऊ नहीं बन सकता।

3.8 आर्थिक सहयोग

अभ्यास के जरिये यह बात स्थापित हो गयी है कि व्यापक आधार वाले ग्रामीण विकास के लिये एक बहुत महत्वपूर्ण बिन्दु है समुदाय–आधारित सफल लघु वित्त। (नबार्ड, 1999)। सम्पर्क संस्था ने न सिर्फ बैंक लिंकेज के साथ स्व–सहायता समूह बनाये है और उन्हें कुशलता से चलाया है, बल्कि उन्हें एक संघ के रूप में जोड़ा भी है जो कि अब कृषि के के काम की चीजों की थोक खरीदी और कुछ पैदावारों की बिक्री करता है। इस प्रकार साहूकारों का आदिवासियों पर जो आर्थिक शिकंजा था वह कम हुआ है और इस प्रक्रिया में आदिवासियों का राजनीतिक प्रभाव भी बढ़ा है।

3.9 शिक्षा और स्वास्थ्य कार्यक्रम

शिक्षा और स्वास्थ्य के महत्व पर जोर देने की जरूरत नहीं है और सम्पर्क संस्था के इन क्षेत्रों में न केवल खुद के कार्यक्रम हैं बल्कि ये कार्यक्रम सरकार पर दबाव भी डालते हैं कि वह इनकी गुणवत्ता में सुधार करे।

3.10 जेण्डर विकास

उपर वर्णित सभी रणनीतियां इस समझ के साथ बनी थीं कि महिलाएं सभी विकास और अधिकार आधारित कामों में पुरुषों के समान भाग लेंगी। इसके अलावा महिलाओं के खुद के प्रजनन स्वासथ्य और अधिकारों के अंधेरे और मूक मामले में खास कार्यक्रम हैं और परिणाम स्वरूप अभियान और विकास के काम में महिलाओं की भारी सहभागिता है।

4. प्रभाव

इसका त्वरित सबसे बड़ा प्रभाव यह है कि अभियान ने 'द मध्यप्रदेश डिटरमिनेशन आफ लायबिलिटी रूल्स 1979' को मध्यप्रदेश में पहली बार लागू करने के लिये सरकार को सफलता पूर्वक बाध्य किया है। हालांकि अभियान में भाग लेने वाले लोग ज्यादातर पेटलावद तहसील के थे, बेजा कर्ज मुक्ति के लाभ में सरकार ने झाबुआ जिले में लागू की गयी सभी असफल उदवहन सिंचाई योजनाओं को भी शामिल कर लिया। इस प्रक्रिया में भ्रष्ट सरकारी अधिकारियों को दण्डित न किये जाने को और साहूकारों की राजनीतिक ताकत को प्रभावी ढंग से चुनौती दी गयी है। इसके अलावा, सम्पर्क ने विकास के जो काम किये हैं उनने त्रुटिपूर्ण उद्‌वहन सिंचाई योजनाओं के मुकाबले उपयुक्त और टिकाऊ वैकल्पिक प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन का प्रदर्शन किया है। भारतीय संविधान ने जो प्रजातांत्रिक राहत प्रदान की है उनके अनुसार भारत की कार्यपालिका को इस बात की जिम्मेदारी दी गयी है कि वह –''कानून का शासन'' कायम करके सभी नागरिकों के लिये, विशेषकर अनुसूचित इलाकों में रहने वाले आदिवासियों के लिये, स्वतंत्रता, न्याय और समानता सुनिश्चित कराये। असल में भीलों की गरीबी, निरक्षरता और सामाजिक अलगाव का मतलब यह रहा है कि आजादी के बाद उनके साथ लगातार धोखा हुआ है और उन्हें विकास के फलों से वंचित रखा गया है। इस प्रकार लोक जागृति मंच के द्वारा चलाया गया बेजा कर्ज मुक्ति अभियान का और उससे जुड़ी सम्पर्क संस्था द्वारा किये गये पूरक विकास कार्य का सबसे महत्वपूर्ण दीर्घकालीन प्रभाव यह हुआ है कि झाबुआ में कानून का शासन प्रभावी रूप से स्थापित हुआ है।

5. अभियान मूल्यांकन मेट्रिक्स (Campaign Evaluation Matrix)

ऊपर जो विश्लेषण किया गया है उससे हमें अभियान मूल्यांकन मेट्रिक्स (Campaign Evaluation Matrix-CEM) बनाने के लिये पर्याप्त तथ्य और अन्तर्दृष्टि मिल जाती है जिससे अभियान के समग्र अभियान का, कार्यान्वयन की रणनीतियों का और जिन अनुमानों पर यह आधारित था उनका और प्रोजेक्ट के प्रभाव का सारांश मिल जाता है। अभियान के लिये CEM अग्रलिखित सारिणी 5 में दिया गया है–

सारांश का ब्यौरा	रणनीति	प्रभाव	अनुमान
समग्र लक्ष्य			
उदवहन सिंचाई योजना के काम न करने के कारण आदिवासियों के कर्ज की तुरन्त माफी हासिल करना और आगे के लिये यह सुनिश्चित करना कि पश्चिमी मध्यप्रदेश में भीलों के आवासक्षेत्र की ऊपरी जलग्रहण वाली शुष्क भूमि (upper watershed dry land areas) के लिये ज्यादा सहभागी, न्यायपूर्ण, समतावादी और टिकाऊ नीति बनाये जाना सुनिश्चित किया जाना।	जनता की लामबंदी, पैरवी, अनुसंधान, नेटवर्किंग और विकास कार्य को जोड़ना, ताकि वंचित होने और सशक्तिकरण खत्म होने जुड़ी भील आदिवासियों की समस्याओं का निदान किया जा सके, जिनके कारण असफल उदवहन सिंचाई योजनाओं के अन्यायपूर्ण कर्ज के भार की स्थिति पैदा हुई।	अभियान ने कर्ज माफी के अपना तात्कालिक लक्ष्य की और संविधान में उल्लिखित ''कानून का शासन'' का दीर्घावधि लक्ष्य प्राप्ति कर लिया।	1. अभियान के उद्देश्यों से आम भील पर्याप्त से उत्साहित होकर उसमें भाग लो के लिये तैयार हो जायेंगे और उसकी कामयाबी के लिये संघर्ष करेंगे। 2. सरकार संविधान के अन्तर्गत दिये गये भील आदिवासियों के अधिकारों की रक्षा करने की अपनी जिम्मेदारी पूरी करेगी।
विशेष उद्देश्य			
1. यह तथ्य स्थापित करना कि उदवहन सिंचाई योजना सरकारी एजेन्सियों और सप्लायर की गलती के कारण ही असफल हुई। 2. यह स्थापित करना कि सरकार अपने खुद के कानूनों और नीतियों के द्वारा अपने हिस्से की प्रशासनिक असफलता की वित्तीय जिम्मेदारी वहन करने के लिये बाध्य है। 3. इस इलाके में प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन की एक वैकल्पिक व्यवस्था स्थापित करना जो ज्यादा टिकाऊ और सहभागिता वाली हो। 4. साहूकारों के संदर्भ में आदिवासियों की आर्थिक स्वतंत्रता स्थापित करना। 5. आदिवासियों की राजनीतिक शक्ति स्थापित	1. कानूनी पैरवी– प्रगतिगामी कानूनों और नियमों को सुनिश्चित करना और उनके कार्यान्वयन के लिये दबाव बनाना। 2. आम जनता का जुड़ाव– आम जनता को अपने अधिकारों को प्राप्त करने के लिये सरकार पर दबाव डालने में हिस्सेदारी करना। 3. सहभागी अनुसंधान– लोगों के दावों के समर्थन में आंकड़े जमा करने और उनके विश्लेषण में लोगों को जोड़ना। 4. मीडिया पैरवी– प्रिन्ट और इलेक्ट्रानिक मीडिया से सहयोग हासिल करना। 5. राजनीतिक नेटवर्किंग–स्थानीय से	1. कानून और नियमों का कार्या–न्वयन हुआ। 2. लोक जागृति मंच के सक्रिय सदस्यों की संख्या हजारों में। 3. अनुसंधान सफलता से सम्पन्न किया गया और उनका प्रकाशन किया गया। 4. लोक जागृति मंच और सम्पर्क के काम को कव्हर करने के लिये मुख्य धारा के मीडिया का अत्यन्त बढ़िया समर्थन मिला। 5. सभी स्तरों पर राजनीतज्ञों, जन–संगठनों से संबंध विकसित हुए।	1. वैसा ही है जैसा ऊपर बताये गये लक्ष्य के लिये है। 2. इन उद्देश्यों को कार्यान्वित करने के लिये शिक्षित भील प्रमुख भूमिका अदा करेंगे। 3. प्रबुद्ध और परमा–र्थिक गैर– आदिवासी अभियान का समर्थन करने आगे आयेंगे।

सारांश का ब्यौरा	रणनीति	प्रभाव	अनुमान
करना ताकि फिलहाल उदवहन सिंचाई योजना के कर्ज को माफ करने के लिये और दीर्घकाल के लिये ज्यादा समतावादी और टिकाऊ विकास की नीतियां अपनाने के लिये सरकार पर दबाव बना सकें। 6. आदिवासियों का पारम्परिक सामाजिक नेटवर्क पुनर्जीवित करना ताकि उनकी खोई हुई सामाजिक पूंजी फिर से निर्मित हो सके और हानिकारक सामाजिक रिवाजों को कमजोर किया जा सके। 7. भील समाज में महिलाओं की स्थिति में सुधार करना। 8. शिक्षा, स्वास्थ्य और सेवाओं की स्थिति में सुधार करना।	लेकर राष्ट्रीय स्तर तक के मुख्य धारा वाले राजनीतिक दलों और वैकल्पिक राजनीतिक समूहों का सहयोग प्राप्त करना। 6. सामाजिक पूंजी का पुनर्निमाण– भील आदिवासी समुदायों के पारम्परिक सामाजिक एकजुटता को पुनर्जीवित करना। 7. वैकल्पिक विकास कार्यक्रम– प्राकृतिक संसाधनों के प्रबंधन के वैकल्पिक प्रोजेक्ट कार्यान्वित करना। 8. आर्थिक सहयोग– लघु वित्त और सहकारी कृषि उपजों की खरीद और बिक्री की व्यवस्था करना। 9. शिक्षा और स्वास्थ्य कार्यक्रम– स्वास्थ्य और शिक्षा सेवाओं तक पहुंच को बढ़ाना और उनकी गुणवत्ता में सुधार करना। 10. जेण्डर विकास कार्यक्रम– महिलाओं का सशक्तिकरण और ऊपर बतायी गयी सभी बातों में उनकी भागीदारी सुनिश्चित करना।	6. भील समाज में सामाजिक एक–जुटता फिर से स्थापित हुई और वधू–मूल्य और अन्य त्यौहारों की लागत काफी कम हुई। अडजी–पड़जी (परस्पर श्रम का सहयोग) की प्रथा भी पुनर्जीवित हुई। 7. सहभागी और टिकाऊ प्राकृतिक संयाधन विकास कार्यक्रम सफलता से कार्यान्वित किये गये। 8. स्व–सहायता समूहों का गठन, उन्हें बैंकों से जोड़ा गया और एक केन्द्रीय कृषि संबंधी खरीद और बिक्री एजेन्सी के रूप में उनका संघ बनाया गया। 9. वैकल्पिक शिक्षा और स्वास्थ्य सेवाएं उपलब्ध करायी जा रही हैं। 10. सभी कार्यक्रमों और अभियानों में महिलाओं की भागीदारी प्राप्त हुई।	

6. भावी नीतियाँ

लोक जागृति मंच और सम्पर्क संस्था द्वारा किये गये अभियान और विकास का बुनियादी तर्क ठोस है और इसे मध्यप्रदेश में दूसरे स्थानों पर दोहराये जाने की जरूरत है जिससे आदिवासियों को फायदा हो। अभियान की पूरी प्रक्रिया उसमें भाग लेने वालों और कार्यकर्ताओं के लिये बहुत सीख देने वाला अनुभव था। इस

प्रक्रिया का दस्तावेजीकरण भी अच्छी तरह से हुआ है। इस प्रकार इस प्रक्रिया से जो सीखें मिली हैं उनसे एक व्यवस्थित प्रशिक्षण पुस्तिका विकसित की जायेगी जिससे दूसरे लोग आसानी से इसे दोहरा सकें और दूसरी जगह आदिवासियों की हालत में सुधार कर सकें। इस कवायद में इस प्रभाव–विश्लेषण प्रतिवेदन (Impact analysis Report) का प्रकाशन पहला कदम है। अनुसूचित क्षेत्रों में अनुसूचित क्षेत्रों में पंचायत विस्तार अधिनियम (The Panchayat Extension to Scheduled Areas Act -PESA) पांचवें अनुसूचित क्षेत्रों में आदिवासी समुदायों की शक्ति स्थापित करने का ताकतवर कानूनी आधार उपलब्ध कराता है ताकि अपनी ग्राम सभाओं में विकास और अभिशासन की दिशा हो सके (Banerjee, 2006)। आगे जो रास्ते है उसमें मध्यप्रदेश में पांचवीं अनुसूची में न्यायपूर्ण, समतावादी और टिकाऊ विकासात्मक शासन स्थापित करने के लिये PESA और राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी कानून के प्रावधानों के कार्यान्वयन करना होगा। इसके लिये आधुनिक विकास की व्यापक राजनीतिक अर्थव्यवस्था का मुकाबला करने के लिये रणनीति बनानी होगी और इसके लिये सामाजिक पूंजी की अवधारणा नाकाफी नहीं होगी। (Harris, 2001)। इस अभियान के जरिये स्थानीय प्रशासन और स्थानीय शक्ति–केन्द्र शायद सफलता से शक्तिहीन हो गये होंगे, लेकिन जब तक इसे शुष्क आदिवासी क्षेत्रों म टिकाऊ राजनीतिक अभियान के जरिये दोहराया नहीं जायेगा, तब तक आदिवासियों की विकासात्मक स्थिति में कोई व्यापक बदलाव नहीं होगा और उद्वहन सिंचाई योजना जैसे गलत विकास के उदाहरण भविष्य में दोहराये जाते रहेंगे।

7. संदर्भ

Aurora, G S (1972) : Tribe-Caste-Class Encounters: Some Aspects of Folk-Urban Relations in Alirajpur Tehsil, , Administrative Staff College, Hyderabad.

Banerjee, R (2003) : Status of Informal Rural Financial Markets in Adivasi Dominated Regions of Western Madhya Pradesh, Working Paper No. 2, Department of Economic Analysis and Research, NABARD, Mumbai.

--------------- (2006) : The Elusive Holy Grail of Tribal Self-Rule: An Analysis of The History behind PESA, at url http://www.cgnet.in/ FT/pesarahul/view?searchterm=PESA accessed on 18th November, 2006.

Census (2001) : Provisional Population Tables: Paper1 of 2001, Series 1, Registrar General & Census Commissioner, India, Delhi.

CGWB (2006) : Groundwater Map of Jhabua, accessed on 24th September 2006 at url http://cgwbmp.nic.in/mapjhabuabig.htm

Cosgrove, W J & Rijsberman, F R (2000) : Making Water Everybody's Business, Earthscan Publications, London.

D'Silva, E. & Pai, S. (2003) : Social Capital and Development Action: Development Outcomes in Forest Protection and Watershed Development, EPW, 38 : 14, Mumbai.

CWDP (2006) : Socio-economic Impact Study of CWDP-MP accessed on 24th September 2006 at url http://www.cwdpmp.nic.in/ Impact%20Study.htm

GOMP (2002) : Madhya Pradesh Year Book 2001, Department of Economics and Statistics, Government of Madhya Pradesh, Bhopal.

Government of Madhya Pradesh, 2006, Jhabua District Statistical Handbook, Department of Economics and Statistics, Bhopal.

Harris, J. (2001) : Depoliticising Development: The World Bank and Social Capital, LeftWord, Delhi.

Mosse, D, Gupta, S, Mehta, M, Shah, V, Rees, J and KribP Project Team, 2002, Brokered Livelihoods: Debt, Migration and Development in Tribal Western India, The Journal of Development Studies, Vol, 38 No.5, London.

MPHDR (2002) : The Madhya Pradesh Human Development Report: Using the Power of Democracy for Development, Madhya Pradesh Government, Bhopal.

NCAER (1963) : Socio-Economic Conditions of Primitive Tribes in Madhya Pradesh, National Council of Applied Economic Research, New Delhi.

National Bank for Agriculture and Rural Development (1999) : Report of the Task Force on Supportive Policy and Regulatory Framework for Microfinance in India, Mumbai.

Rahul (1996) : The Unsilenced Valley, Down To Earth, June 15, 1996.

------ (1997) : Reasserting Ecological Ethics: Bhils' Struggles in Alirajpur, Economic and Political Weekly Vol.30 No.3.

Shah, M, Banerji, D, Vijayshankar, P S & Ambasta, P (1998) : India's Drylands: Tribal Societies and Development through Environmental Regeneration, Oxford University Press, Delhi.

Shah, P. (1993) : Participatory Watershed Management Programmes in India: Reversing Our Roles and Revising Our Theories in Rural People's Knowledge, Agricultural Research and Extension Practice, IIED Research Series, Vol 1 (3), IIED, London,

Sharma, B D (2001) : Tribal Affairs in India: The Crucial Transition, Sahayog Pustak Kutir Trust, Delhi.

Yugandhar, B. N., (1999) : Watershed Based Development in Arid and Semi-Arid Areas of Andhra Pradesh, Journal of Rural Development, Vol 18 No 3, Hyderabad.

पत्रिकाएँ	**कीमत रु.**
धन कमाड़ (बच्चों के लिये विज्ञान के ज्ञान की पत्रिका)	5
पुस्तकें	
भारतीय कृषि पर जीनान्तरित बीज का खतरा	50
मध्यप्रदेश की प्रस्तावित पशुधन नीति हेतु समुदाय की अनुशंसाएं	निःशुल्क
चौका चूल्हा की सरहद लांघते हुए	निःशुल्क
सरल पशु चिकित्सा	30
बा नी बात (भीली कहावतों और पहेलियों का संग्रह ।)	5
घरेलू कीटनाशक एक मार्गदर्शिका	20
लोक परम्पराओं के रास्ते विकास की यात्रा	20
बी टी कॉटन भारतीय कृषि के साथ विश्वासघात	10
आधी दुनिया भूखी क्यों?	10
बारबयिाना के स्कूल का गुरूजी के नाम पत्र	75
पोस्टर्स	
दापा प्रथा, चौपाल का न्याय, कर्ज बना जी का जंजाल, सूखा कल आज और कल, पंचायत राज सशक्तिकण, पालक शिक्षक संघ : एक जवाबदारी, बालिका शिक्षा, लोक कल्याणकारी योजना, निर्धूम चूल्हा, उद्‌वहन सिंचाई योजना : बरबादी का बिछौना, दीनदयाल उपचार योजना।	प्रति / 5
वृत्त चित्र	
पानी की जुगत में आम आदमी	60
पानी के लिये गोलबन्द गांव	60
सफेद सोने का सच	60
पशुओं की सेहत के पहरुए	60
यूं छटा अंधेरा	60
गांव का उत्सव	60
लोक पवरम्परा के रास्ते विकास के वास्ते	60
बच्चे मन के सच्चे	60
कतरा–कतरा रोशनी के लिये	60
स्कूल में अंधेरा	60
शैक्षिक जागरण से संबंधित भील गीतों पर सी.डी / कैसेट	20

भास्कर
किसानों को इतना गुस्सा
हमें खुदकुशी करने दें राष्ट्रपतिजी
दैनिक भास्कर
किसानों पर कर्ज का कहर
village witnessing progress
HT Madhya Pradesh
कर्ज माफी हेतु रैली, ज्ञापन पदयात्रा
योजना से पीड़ित किसानों की कर्ज माफी के लिए पहल